गंगा-पुस्तकमाला का ११२ वाँ पुष्प

पाप की ओर

लेखक

(जापानी भाषा के सुलेखक जून इचिरो टानीसाकी के 'ओ-सूया-कोरोशी'-नामक श्रेष्ठ उपन्यास का अनुवाद)

अनुवादक

प्रतापनारायण श्रीवास्तव बी० ए०

प्रकाशक

गंगा-पुस्तकमाला-कार्यालय

प्रकाशक और विक्रेता

लखनऊ

प्रथमावृत्ति

सजिल्द १|)] सं० १९८७ वि० [सादी १)

भूमिका

प्रस्तुत उपन्यास जापानी भाषा के सुलेखक जून इचिरो टानीज़ाकी अथवा टानीसाकी के 'ओ-सूया-कोरोशी' का अनुवाद है। मेरा विश्वास है कि अनुवादित पुस्तकों से हम अपने साहित्य की वृद्धि नहीं कर सकते, न अनुवाद द्वारा हम अपने साहित्य को गौरवान्वित कर सकते हैं, और न अनुवाद करके हम हिंदी-भाषा को संसार की एक भाषा ही बना सकते हैं; किंतु फिर भी मैंने इस पुस्तक का अनुवाद किया है। इसके कई कारण हैं। प्रथम यह कि इस उपन्यास के द्वारा हम जापानी जीवन की एक छटा हिंदी के पाठकों को दिखा सकते हैं, दूसरे इस प्रकार के उपन्यासों के अनुवाद करने से एक लाभ यह भी है कि हमें यह विदित हो जायगा कि उनके कथानकों की शैली कैसी है, वे किस प्रकार से, किस दृष्टिकोण से संसार की वस्तुओं को निरखते हैं, और उनके संबंध में उनका क्या विचार है। मानव-चरित्र सृष्टि के आरंभ से ही एक पहेली के सदृश रहा है। आज तक न-मालूम कितने नाटक, उपन्यास लिखे गए, किंतु सर्वत्र हमें एक अद्भुत मनुष्य से परिचय होता है, जो इतर मनुष्यों से बिलकुल विभिन्न है। कालिदास के भिन्न-भिन्न पात्र बिलकुल ही स्वतंत्र मनुष्य हैं। कालिदास के राम और वाल्मीक के राम में बहुत अंतर है, तुलसीदास के राम तो दोनो ही से विभिन्न हैं। पार्वती, यक्ष, दुष्यंत, शकुंतला आदि सब विभिन्न व्यक्ति हैं। इसी भाँति शेक्सपियर के अड़तालीस नाटकों के पात्र एक दूसरे से बिलकुल भिन्न हैं। लेडी मैकबेथ, और क्लिओपेट्रा में बहुत अंतर है, पोर्शिया और रोज़ालिंड में बहुत भिन्नता है, मिरांडा और इयोजेन, दोनो में भेद है। एक, कैलीबान,

एरियल, इयागो, हैमलेट, जाक्स, ओथेलो और लियर, रोमियो, हेनरी फ़ोर्थ, हेनरी सिक्स्थ, रिचार्ड, सब भिन्न-भिन्न स्वतंत्र मनुष्य हैं। ह्यूगो के नाटकों और उपन्यासों के पात्र, जीन विलजिन, जैवर्ट, कुबड़ा, लाफ़िंगमैन, कासीट आदि सभी अलग-अलग जीवित मनुष्य हैं। तात्पर्य यह कि जितने मनुष्य एक मनुष्य विशेष की कल्पना करेंगे, उन सबकी कल्पना में विभिन्नता और विपरीतता अवश्य होगी। इसी उपन्यास में टानीसाकी की सूया एक अद्भुत रमणी है। ऐसी स्त्रियों से भारत में भी परिचय होता है, किंतु यहाँ और वहाँ के वायु-मंडल का प्रभाव, जो दो-एक ही जैसे व्यक्तियों पर पड़ता है, उन्हें कितना विभिन्न कर सकता है, इसका चमत्कार उसी देश के लेखकों द्वारा देखा जा सकता है। प्रत्येक लेखक का दृष्टिकोण भिन्न होता है, और इसी के कारण पात्रों में भी विभिन्नता होना आवश्यक है।

तीसरे यदि हम अपनी साहित्योन्नति करते हुए दूसरे देश के सु-लेखकों के उपन्यासों का अनुवाद करें, तो यह कार्य गर्हित नहीं है, हाँ, बंग-भाषा के सड़े-सड़े उपन्यासों का अनुवाद करने की प्रथा अवश्य निंदनीय है। यदि किसी उत्कृष्ट लेखक के उत्कृष्ट उपन्यास का अनुवाद हो, तो ठीक है, उससे हम अपने साहित्य की उन्नति कर सकते हैं, हम अपने विचार-प्रवाह को विशद कर सकते हैं, हमारा ज्ञान अवश्य बढ़ जायगा; किंतु इससे साहित्य की कमी पूरी नहीं की जा सकती।

हम ऊपर कह आए हैं कि प्रस्तुत उपन्यास जापानी भाषा के उत्कृष्ट उपन्यास-लेखक की लेखनी का चमत्कार है। टानीसाकी आज से बीस वर्ष पहले से उपन्यास लिख रहे हैं। उनकी कीर्ति और यश वैसे ही अक्षय बना हुआ है। वे अपनी भाषा के सम्राट् समझे जाते हैं, और वास्तव में बात भी ऐसी है। उनके उपन्यासों में ओज, प्रसाद और माधुर्य तीनों गुण विद्यमान हैं। मानव-चरित्र के चित्रण का उन्हें अच्छा ज्ञान है। उनके पात्र जीवित मनुष्यों की तरह हमारी आँखों के सामने

आ जाते हैं, और पढ़ते-पढ़ते हम उनके साथ इतने तल्लीन हो जाते हैं कि अपनी सुध-बुध सब खो देते हैं।

सफल लेखक वही है जो प्रतिदिन घटनेवाली घटना को इस रूप से पाठकों के सामने रखता है, जिसे पढ़कर वह सोचता है कि "ठीक मेरा भी यही विचार है, किंतु आज तक मैंने कभी यह अनुभव नहीं किया।" जिस लेखक की पुस्तकें पढ़कर पाठक अपने आप यह कह उठते हैं, वही सफल लेखक है, और वह अपने संदेश में सफलीभूत भी हो चुका। सफल लेखक के लिये यह आवश्यक नहीं है कि वह विचित्र मनुष्यों की कल्पना करे अथवा ताबड़तोड़ घटनाओं का सिलसिला बाँध दे या आदर्श मनुष्य का चरित्र चित्रण करे। यदि वह अपने पात्रों में जीवन डाल सकता है, तो वे पात्र पढ़नेवालों की सुध-बुध भुला देते हैं, और वे सच्चे मनुष्य मालूम होते हैं, ऐसे स्वाभाविक जैसे जीवन में उनसे हमारा साक्षात् होता रहता है। कोरी कल्पना के विचित्र मनुष्य भी हों, किंतु उनमें सत्यता और स्वाभाविकता है, तो वे अवश्य सफल लेखक के पात्र हैं। चाहे वे आदर्श मनुष्य हों या देवता, किंतु स्वाभाविक हों। लेखक चाहे जिस तरह की कल्पना करे, किंतु उसमें स्वाभाविकता होनी चाहिए। जो ऐसा कर सकता है, वही सफल लेखक है।

दूसरे, सफल लेखक वे हैं, जिनके लेखों द्वारा मानव-चरित्र के भीतरी रहस्य को देखने का अवसर मिले। जिनके लेखों को पढ़कर मानव-ज्ञान के संबंध में हमारे विचार और हमारी बुद्धि बढ़ जाय। अथवा मैथ्यू आरनोल्ड के शब्दों में जिनमें 'High Seriousness and truth' हो। अथवा "सार्टर रिसार्टस" (Sartor Resartus)-जैसी अद्भुत पुस्तक के लेखक कारलाइल के शब्दों में—"जो साधारण मनुष्य को असाधारण करके दिखला सके।" अथवा महाकवि और समालोचक गेटे के शब्दों में—"जो मानव-

जीवन के एक भाग को संपूर्ण करके दिखला सके।" अथवा "लोसाई क्रीटासाई" के लेखक और इसी काल के अँगरेज़ी भाषा के सर्व-मान्य आचार्य "सेंटस् बरी" के शब्दों में—"जो मानव-जीवन की सफलता का दिग्दर्शन करा सके।" वही सफल लेखक है।

टानीसाकी के उपन्यासों में हमें यही बात मिलती है। इस उपन्यास की नायिका सूया, एक चंचल, कुशाग्र बुद्धिवाली, महत्त्वा-कांक्षा-पूर्ण साधारण-सी बालिका प्रतीत होती है। पहले-पहल जब हमारा परिचय होता है, तो वह हमें एक साधारण प्रेम करनेवाली बालिका मालूम पड़ती है। ज्यों-ज्यों हमारा ज्ञान उसके संबंध में बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों हमें आश्चर्य से मुँह में उँगली दबानी पड़ती है। जब वह एक वायु-मंडल में थी, तब वह कितनी भोली-भाली, प्रेम करनेवाली बालिका थी; किंतु दूसरे वायु-मंडल में जाते ही वह बिल्कुल बदल जाती है, प्रेम के ऊँचे आदर्श से गिर जाती और विलासिनी हो जाती है। सूया का चरित्र-चित्रण कितना स्वाभाविक हुआ है, यह पढ़ने से ही मालूम होगा। नायक शिनसुकी का चरित्र भी कितना स्वाभाविक और मनोरम है। शिनसुकी एक सरल, वीर और साहसी पुरुष है। वह सूया से प्रेम करता है। वह भागने के लिये तैयार नहीं होता, किंतु सूया उसे ज़बरदस्ती अपने साथ भगा ले जाती है। आत्मरक्षा करते हुए वह एक मनुष्य को मार डालता है। क़ानूनन् वह अपराधी नहीं है, किंतु उसकी आत्मा उसे धिक्कारती है। वह समझता है कि वह अपराधी है। किंतु एक ही घंटे बाद वह दूसरी हत्या करता है। वह अपने जीवन से ऊब उठता है। उसका जीवन उसे भार हो जाता है। वह अपने को न्याय के हाथों में समर्पित करने को कटिबद्ध है, किंतु सूया का पता लगाने के लिये वह ठहर जाता है। जिस मनुष्य के पास जाकर वह रहता है, वह दुनिया देखे है। उसकी दृष्टि इतनी सूक्ष्म है कि वह संसार की प्रत्येक ऊँचाई-

निचाई को जान गया है। उसे मालूम है कि यदि मनुष्य एक बार भी पाप के गड्ढे में गिर जाता है, तो उसका निकलना यदि असंभव नहीं, तो महा कठिन अवश्य है। शिनसुकी चार महीने के बाद सूया से फिर मिलता है। उसके सद्विचार वैसे ही हैं। पर सूया बदल गई है। वह इन्हीं चार महीनों में विलास-प्रिय हो गई है। उसकी स्वाभाविक सरलता और प्रेम दोनो विलास के आवरण से ढक गए हैं। वह शिनसुकी से मिलकर प्रसन्न होती है, क्योंकि वह सुंदर पुरुष है। उसे देखकर उसके हृदय में गुदगुदी पैदा होती है। उसमें पहलेवाला प्रेम नहीं रहा, उसका हृदय स्वार्थ और वासना से लिप्त हो गया है। शिनसुकी युवा है, भोग-विलास की लालसा उसके हृदय में है। सूया उस अग्नि को भड़काती है और उससे तीन दिन रहने की प्रतिज्ञा करवा लेती है। शिनसुकी यद्यपि मनुष्य-हत्या का अपराधी था, किंतु वह चम्य था, वह तीन ही दिन में बिल्कुल बदल जाता है, मनुष्य से पशु हो जाता है। घटना-चक्र के वशीभूत होकर वह तीसरे आदमी की हत्या करता है। किज़ो की भविष्य-वाणी पूरी होती है। वह और नीचे गिरने लगता है। थोड़े ही दिनों में वह एक और मनुष्य की हत्या करता है। सूया और शिनसुकी दोनो, मनुष्यों को मारकर और उनकी संपत्ति लूटकर आनंद-विलास करते हैं। दोनो अत्यंत पतित हो जाते हैं, यहीं तक बस नहीं, सूया का मन अब शिनसुकी से ऊब उठता है, वह दूसरे पुरुष के प्रेम में पड़ जाती है, और महीनों उसकी अंकशायिनी रहती है। विश्वासघात, झूठ, फ़रेब आदि दोष कितनी सरलता से उस पर अपना प्रभाव डालते हैं, वह देखते ही बनता है। दोनो के चरित्रों का प्रस्फुटन बिल्कुल स्वाभाविक हुआ है। सूया और शिनसुकी जीते-जागते मनुष्य मालूम पड़ते हैं। मानव-जीवन का एक अंग संपूर्ण करके दिखला दिया गया है। इसमें गांभीर्य और सत्यता दोनो हैं। तभी तो टानीज़ाकी एक उत्कृष्ट लेखक हैं।

टानीसाकी की भाषा बहुत ही सरल और भावमयी है। उत्तम लेखक सरल भाषा में ही अपने तीनो गुण प्रकट कर सकता है। भाषा जितनी ही सरल होगी, उतनी ही भावों से पूर्ण होगी। सुलेखक जो कुछ सोचता है, सरल भाषा में ही कह देता है, टेढ़े-मोढ़े बड़े-बड़े शब्दों में नहीं। टानीसाकी की भाषा का आनंद जहाँ तक हो सका है, इस अनुवाद में देने का यत्न किया गया है, किंतु यह एक मानी हुई बात है कि अनुवाद में कभी भी मूल का आनंद नहीं आता। जिस तरह सिनेमा में हम चित्रों को देखते हैं, जो वास्तविक मनुष्यों के प्रतिबिंब-मात्र होते हैं, उसी प्रकार इस पुस्तक में भी टानीसाकी की केवल छाया-भर मिलेगी, और कुछ नहीं। यदि पाठकों का कुछ भी मनोरंजन हो सका, तो मैं अपने को सफल समझूँगा।

इस उपन्यास का कथानक बिलकुल स्वतंत्र जापानी है। यद्यपि इसमें पश्चिमीय सभ्यता का प्रभाव पड़ा है, फिर भी स्वतंत्र है और जापानी है। यह कहानी पाँच खंडों में विभक्त की गई है। एक-एक खंड में एक-एक विचित्र रहस्य खोला गया है। खंडों में परिच्छेद नहीं हैं, एक खंड ही एक परिच्छेद है। इसमें कुछ असुविधा अवश्य है। एक खंड यदि आरंभ किया जाय, तो उसको समाप्त करने में देर लगेगी, इससे पाठकों को असुविधा हो सकती है। मेरा विचार था कि मैं इन्हें परिच्छेदों में विभक्त कर दूँ, किंतु फिर मूल-लेखक की शैली बिगाड़ने की इच्छा न हुई। अतएव वह वैसा ही पाठकों की भेंट है।

नामों के संबंध में ग़लती होना स्वाभाविक ही है। जापानियों के नाम विचित्र होते हैं, उनकी भाषा भी विचित्र है। उनकी लिपि देखने से तो यही मालूम होता है कि छप्पर और खपरैलों की कल्पना रेखाओं द्वारा की गई है। अथवा बैंड बजाने के सांकेतिक शब्द लिखे गए हैं। यदि नामों के उच्चारण लिखने में या और कोई ऐसी ही त्रुटि रह गई हो, तो पाठक क्षमा करेंगे।

जहाँ तक हो सका है, मूल का यथावत् अनुवाद किया गया है, इसलिये जिसमें हिंदी-भाषा-भाषी यह जान जायँ कि जापान के लेखक कैसे उपन्यास लिखते हैं, किस प्रकार सोचते हैं, उनका मानव जीवन के संबंध में क्या विचार है, इत्यादि। परंतु जहाँ अनुवाद होना मुश्किल था, या यथावत् अनुवाद करने से कुछ दूसरा ही आशय प्रकट होता, वहाँ पर आशय ही लिखा गया है। एक प्रकार से इसे भावानुवाद ही कहना ठीक होगा। साथ-साथ मूल की भाषा का मज़ा देने के लिये भी यत्न किया गया है।

प्रस्तुत उपन्यास संवत् १९७२ में प्रकाशित हुआ था। यह उनके प्रथम काल का उपन्यास है, किंतु लेखनी में प्रौढ़ता आ चुकी है। जापानी भाषा में इसका नाम है "ओ-सूया-कोरोशी"। किंतु हमने इसका नाम रक्खा है "पाप की ओर", जो हमारी समझ में उपयुक्त है, और पाप के प्रति आसक्ति दिखलाना ही लेखक का ध्येय है।

यदि इस पुस्तक द्वारा जापानियों के आंतरिक जीवन का कुछ भी ज्ञान हिंदी-भाषा-भाषियों को हो सका, तो मेरा परिश्रम सफल हो जायगा। इस उपन्यास को अनुवाद करने की इच्छा इसीलिये हुई कि अभी तक हिंदी-भाषा में किसी भी जापानी भाषा का अनुवाद नहीं हुआ। हमारा पड़ोसी जापान कितनी शीघ्रता से उन्नति कर रहा है, और हम कैसे निश्चेष्ट बैठे हैं, एक दूसरा आशय यह भी था। जापान और भारत में कितना सादृश्य है, यह भी पढ़ने से मालूम हो जायगा। हम लोग सहज ही में उनसे अपना संबंध स्थापित कर सकते हैं, शायद यह भी पढ़ने से मालूम हो सकेगा। जो कुछ भी त्रुटियाँ रह गई हों, सहृदय पाठक क्षमा करेंगे।

लेखक की जीवनी

जून इचिरो टानीज़ाकी का जन्म संवत् १६४३ में, टोकियो में, हुआ। १६६२ में शिक्षा समाप्त करके उन्होंने वकालत पढ़ना शुरू किया, किंतु साहित्य की ओर रुचि रहने के कारण उन्हें वकालत करने का इरादा छोड़ देना पड़ा। अपनी देशी भाषा की शिक्षा समाप्त करने के बाद उन्होंने अँगरेज़ी भाषा का अध्ययन आरंभ किया, और दूसरे वर्ष टोकियो-विश्वविद्यालय में साहित्य पढ़ने के लिये गए। संवत् १६६६ में 'शिनशीच्यो' (नव विचार-प्रवाह) नाम का एक मासिक पत्र निकाला। साहित्य की उन्नति की ओर उनको इतनी अभि-रुचि थी कि वह विश्वविद्यालय को छोड़ने में ज़रा न हिचकिचाए। संवत् १६७६ और १६८३ में उन्होंने चीन की यात्रा की और दोनो बार उन्होंने इस यात्रा से बहुत लाभ उठाया। उनके विचारों के विशद होने का अवसर मिला, जिनकी प्रतिभा उनकी पुस्तकों में देखी जा सकती है।

जब संवत् १६७७ में, टोकियो में 'टायशो ईगा कैशा' सिनेमा-कंपनी की स्थापना हुई, तब टानीसाकी उस कंपनी में लेखक होकर कार्य करने लगे। किंतु यहाँ पर भी वे एक वर्ष से अधिक न रह सके। किंतु अपने एक ही वर्ष के संबंध में उन्होंने कई साहित्यिक पुस्तकों तथा नाटकों को चित्रित किया है।

उसके पश्चात् से वे स्वतंत्र रूप से मासिक तथा पाक्षिक पत्रों में लिखते हैं, और अभी तक उन्होंने कई उपन्यास, कविताएँ, नाटक, कहानियाँ और निबंध लिखे हैं।

निम्न-लिखित तालिका पाठकों को उनकी साहित्यिक अभिरुचि का

पता भली भाँति दे सकेगी । "युवा" १९६७, "आदमोनो" १९६९, "ओ-सूया-कोरोशी"—(प्रस्तुत पुस्तक जिसका अनुवाद है) १९७२, "ओ-साई टोमिनो कीची" १९७२, "नास्तिक का शोक" १९७३ ; "रोगी का चित्र" १९७३, "एक बालक का डर" १९७६, "ठग" १९७७, "अ और ब की कहानियाँ" १९७८, "हान मोकू की रातें" १९७९, "ईश्वर और मनुष्य के मध्य" १९८०, "मूर्ख का हृदय" १९८१, "सब प्रेम के लिये" १९८१, "प्रकाश, छाया और प्रेम" १९८१, "शानधाई के चित्र" १९८३, इत्यादि पुस्तकें उक्त वर्षों में प्रकाशित होती रही हैं ।

इस समय टानीज़ाकी की अवस्था ४३ वर्ष की है, और इस समय वह जापान के सबसे प्रसिद्ध लेखक हैं । आज से १८ वर्ष पूर्व उनको ख्याति मिलनी शुरू हुई थी, और अभी तक उसकी उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है । जापान में एक विचित्र बात यह है कि जापानी कभी भी किसी एक विचार, अथवा मनुष्य के भक्त होकर नहीं रह सकते । जो आज प्रिय है, कल वही अप्रिय हो उठता है, इसलिये उनके यहाँ का कोई लेखक अमर यश नहीं पा सका है । किंतु टानीज़ाकी को आज १८ वर्ष से प्रशंसा मिल रही है, और उत्तरोत्तर उसकी वृद्धि भी हो रही है, यही टानीज़ाकी की प्रियता का एक कारण है । एक नया लेखक तो थोड़े ही दिनों में इतनी ख्याति लाभ कर लेता है, जितनी कि यहाँ लाभ करने के लिये अटूट परिश्रम की आवश्यकता है, किंतु दूसरे ही दिन कोई भी उसका नाम नहीं लेता। टानीज़ाकी ही जैसा भाग्यवान् जापानियों का प्रेम-पात्र हो सका है ।

टानीज़ाकी में एक ख़ास बात यह है कि वह एक स्वतंत्र विचारों के मनुष्य हैं । कभी भी एक विशेष बात के ग़ुलाम होकर नहीं रहते । पुराने और नए भावों को ग्रहण कर उनके सम्मिश्रण से एक नया भाव पैदा करने की उनमें अपूर्व क्षमता है । पश्चिमीय और पूर्वीय

सभ्यता को ग्रहण करके फिर भी स्वदेशी सभ्यता को स्वतंत्र रूप से रख सकना ही उनके यश का कारण है।

टानीज़ाकी ने पश्चिमीय साहित्य का अध्ययन भी ख़ूब किया है। उन्होंने पो, जार्ज मोर बाडलेयर, गातियर और बालज़ाक-जैसे अँगरेज़ी और फ्रेंच-लेखकों को ख़ूब मनन किया है। उनके विचारों से अपने विचारों को मिलाकर तथा अपने दृष्टिकोण को उनके दृष्टि-कोण से युक्त करके उन्होंने अपनी पुस्तकें लिखी हैं, इसीलिये वे इतनी स्वाभाविक और उच्च हैं। पश्चिमीय प्रभाव उनके लेखों में बहुत कम मिलेगा, और जहाँ मिलेगा वहाँ पर नवीनता का एक भाव और रंग लिए।

टानीज़ाकी ने जिस समय लिखना शुरू किया, उस समय नवयुग का आरंभ हुआ था। देश के सब वयोवृद्ध पुरानी लकीर के फ़क़ीर हो रहे थे, और नवयुवक-दल नई रोशनी को अपना रहा था। इसी समय टानीज़ाकी ने लिखना आरंभ किया। परिणाम यह हुआ कि वे नवयुवकों के तो पूज्य-देव हो गए और पुराने आदमियों के भी चक्षु-शूल नहीं हुए। हाँ, उन्हें उनसे उतनी ख्याति नहीं मिली, जितनी कि मिलना उचित था।

टानीज़ाकी को यदि नवयुग का प्रवर्तक कहा जाय, तो अतिशयोक्ति न होगी। जापानी-साहित्य में नव जीवन डालनेवाले वही प्रथम पुरुष थे, और बाद में होनेवाले नवीन लेखकों को उन्होंने प्रोत्साहन भी ख़ूब दिया है।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव

अनुक्रमणिका

जापान की राजधानी 'टोकियो' का पूर्व नाम 'येदो' था। जिस काल की यह कहानी है उस समय भी 'टोकियो' 'येदो' के नाम से विख्यात था। 'येदो' कहने से जापान के उस ऐतिहासिक काल का बोध होता है, जो उसकी जागृति के पहले का है। उस समय भी 'येदो' कला और साहित्य का मुख्य केंद्र हो रहा था। उसका प्रतिद्वंद्वी कोई दूसरा नगर न था। वह अपने धन, उन्नति और वाणिज्य-व्यवसाय के लिये प्रसिद्ध था।

प्राचीन काल में जापान सदैव एक अशांत और लड़नेवाला देश रहा है। बराबर आपस में लड़ाई लगी रहती थी। एक जाति दूसरी का सर्वनाश करने के लिये तैयार रहती, और 'येदो' सदैव रणचंडी का क्रीड़ा-स्थल बना रहता था। शोगुन-राज-वंश के समय में जाकर कहीं शांति स्थापित हुई, और उसी समय से 'येदो' ने उन्नति करना आरंभ किया। उन्नति भी इस तरह आरंभ हुई कि थोड़े ही काल में वह कला और साहित्य के उच्च शिखर पर पहुँच गया। गणनानुसार शोगुन-राज्य-काल का प्रथम संवत् हमारे विक्रमी संवत् का १८७४वाँ वर्ष होता है। अतएव आज से लगभग एक शताब्दी पूर्व जापान का उन्नति-काल प्रारंभ होता है।

जापान एशिया-महाद्वीप का एक देश है। प्राचीन काल में जापान और भारत का संबंध पाया जाता है। महामहिम सम्राट् अशोक ही ने जापान में बौद्ध-धर्म की नीव डाली, और आज भी हमें गौरव है कि जापानी अभी तक अपने को बौद्ध कहते हैं। किंतु इस शुष्क गौरव के अतिरिक्त हम सब तरह जापान से हीन हैं। आज जापान

की उन्नति हमसे कहीं ऊँचे है, और हम अब भी अपने ही संकीर्ण विचारों में बुद्धि-भ्रष्ट होकर मूर्खों की भाँति डफली बजाकर अपने गौरव के गीत अलापते और प्रसन्न होते हैं।

इसीलिये भारतीय और जापानी सभ्यता में सादृश्य हो, तो कोई आश्चर्य की बात नहीं। हाँ, न होना अवश्य विस्मयकर है। भारत की तरह वहाँ भी आपस की फूट ने सदैव देशोन्नति के मार्ग में रोड़े अटकाए हैं। फूट के अतिरिक्त एक बात और है, जो सदैव से देश की आर्थिक और सामाजिक उन्नति में बाधा-रूप होकर रहती है। वह है धार्मिक कुसंस्कार। धार्मिक कुसंस्कार जब किसी देश के राज्य-परिचालन पर अपना प्रभाव डालने लगते हैं, तब उस देश का पतन होना आरंभ होता है, और जब तक वे विचार दृढ़ रहते हैं, उस देश की उन्नति नहीं हो सकती। संसार का इतिहास देखने से पता चलता है कि जिन-जिन देशों ने धर्म को राज्य-परिचालन की शक्ति से ऊपर स्थान दिया है, वे देश कभी पनप नहीं सके हैं। उदाहरण के लिये स्पेन, फ़्रांस, रूस और आजकल के समय में टर्की का नाम लिया जा सकता है। स्पेन और फ़्रांस के पतन का कारण था रोमन कैथोलिक धर्म। जब फ़्रांस की राज्य-क्रांति के समय 'Goddess of Reason' (बुद्धि-देवी) की स्थापना हुई, और रोमन कैथोलिक धर्म का पलड़ा भी ख़ाली होने लगा, तभी से फ़्रांस ने उन्नति करना आरंभ किया। फ़्रांस का पतन और उत्थान इतिहास का सबसे विचित्र उदाहरण है। ऐसा उदाहरण शायद संसार के इतिहास में न मिलेगा। रूस के भी उत्थान का काल उस समय से आरंभ होता है, जब सम्राट् पीटर ने रूसियों के पहनावे और धार्मिक विचारों पर भी शासन करना आरंभ किया था। उस समय पेट्रिआर्क (रूस के मुख्यतम पादरी) का प्रभाव जनता के हृदय से कम किया गया, और उसका पद राजा की इच्छा पर

निर्भर रह गया। संप्रति-काल में टर्की तो इस बात का ज्वलंत उदाहरण ही है। जब से वीर-शिरोमणि मुस्तफ़ा कमालपाशा ने अपने हाथों में शासन की बागडोर ली है, तभी से टर्की की उन्नति दिन दूनी और रात चौगुनी हो रही है। अतएव यदि धर्म राज्य के साथ बाँध दिया जाय, तो वह देश कभी उन्नति नहीं कर सकता। ठीक यही दशा आजकल हमारे देश की और एक शताब्दी पूर्व जापान की थी। जापान अपनी धार्मिक विमूढ़ता में इतना फँसा हुआ था कि एक धर्म की माननेवाली जाति दूसरी जाति को खाए जाती थी। कलह और अशांति के कारण देश की उन्नति हो ही न सकती थी। शोगुन-राज-वंश के काल में जब शांति स्थापित हुई, तो देश की उन्नति न होना अवश्य आश्चर्य की बात थी। बाद में रूस और जापान-युद्ध के पश्चात् जापान ने ऐसी उन्नति की कि देखनेवाले दंग रह जाते हैं। उसकी इस उन्नति का मुख्य कारण था देश से धार्मिक कुसंस्कारों का लुप्त हो जाना। जापान की धार्मिक दृढ़ता पश्चिम के संयोग से धीरे-धीरे कम होने लगी, और आजकल तो जापानी अपने धार्मिक विचारों में इतने स्वतंत्र हैं कि शायद उनके यहाँ कोई भी काम केवल धर्म के बहाने से रुका नहीं रहता। वे स्वतंत्रता-पूर्वक संसार के राष्ट्रों के साथ रोटी-बेटी का व्यवहार कर सकते हैं—यदि ऐसी विमूढ़ता अभी कुछ अवशेष भी है, तो जापान की उन्नति के साथ-साथ वह भी लोप हो रही है। किंतु हमारा देश! हमारे देश की दशा कुछ और ही है, जो कभी भी अपने को धार्मिक कुसंस्कारों से मुक्त नहीं कर सकता। और जब तक यह दशा रहेगी, तब तक भारत की उन्नति भी नहीं हो सकती।

अस्तु। शोगुन-राज्य-काल से जापान की आर्थिक, सामाजिक, नैतिक और साहित्यिक उन्नति आरंभ होती है। लोग खाने-पीने से ख़ुश थे, और सानंद जीवन व्यतीत करते थे। ख़ून से भरी हुई तल-

वारें पोंछकर म्यानों में रख दी गई थीं, और जो हाथ अभी तक तलवार पकड़ते थे, वे लेखनी और कूची पकड़ने लगे। साहित्य की उन्नति आरंभ हो गई। 'गोनोरूक्' के राज्य-काल में तो 'येदो' को वह सम्मान मिला, जो आज तक जापान के किसी भी नगर को नहीं मिला। एक-से-एक कवि, लेखक और चित्रकार उत्पन्न हुए, जिन्होंने जापान के नाम को अमर कर दिया।

टानीसाकी ने अपनी इस कहानी द्वारा इसी काल की छटा का दिग्दर्शन कराने की चेष्टा की है। उसी काल की दशा का चित्र खींचा गया है, किंतु इस प्राचीन काल के चित्र में भी नवीन काल की छाया देखने में आती है। यह टानीसाकी की दुर्बलता नहीं है, एक स्वयं प्रमाणित सत्य साधारण बात है। किसी भी लेखक के जीवन-काल और उसकी जीवन-प्रगति का प्रभाव उसके लेखों पर पड़े बिना नहीं रह सकता। लेखक चाहे जितनी प्राचीन घटना की कल्पना करे, उसे वैसा ही रूप देने की चेष्टा करे, वह अपनी चेष्टा में सफल भी हो जाय, किंतु उसके समय का प्रभाव उस पर अवश्य पड़ा होगा। आज तक कोई भी लेखक अपने को इस प्रभाव से मुक्त नहीं कर सका है। कालिदास, तुलसीदास, शेक्सपियर, ह्यूगो, गेटे, दाँतें और टाल्सटाय के लेखों में भी वही अपने काल का प्रभाव साफ़-साफ़ देख पड़ता है।

टानीसाकी ने बहुत ही सरल भाषा में यह कहानी लिखी है, इसीलिये इसमें ओज, प्रसाद और माधुर्य तीनो गुण हैं। इस कहानी में जापान के उस सामाजिक जीवन पर प्रकाश डाला गया है, जो उसके जीवन का मुख्य अंग है। यह जीवन जिस समय से आरंभ हुआ है, तब से अभी तक वैसा ही है। यह वह जीवन है, जिसमें जापानी स्त्रियों को अपने प्राकृतिक गुणों और शिक्षा के संसर्ग से उत्पन्न हुई नव-सभ्यता को प्रस्फुटित करने का अवसर मिलता है, तथा

पुरुष भी उनके संसर्ग से अपना मनोरंजन और लाभ उठा सकते हैं। जापान में इस जाति का उन्हीं की भाषा में नाम है "गीशा"। गीशा का अनुवाद ऊँची जाति की वेश्याओं से किया जा सकता है। हमारे देश में वेश्याओं का सामाजिक स्थान बहुत नीचे है, किंतु जापान में वैसा नहीं। जिस प्रकार ऊँची जाति की वेश्याएँ अपने गान और हास्य-परिहास से पुरुषों का मनोरंजन करती हैं, उसी प्रकार जापान में गीशा भी अपने गान और नृत्य-वाद्य-कला से पुरुषों को मुग्ध करती हैं। वेश्या और गीशा में एक अंतर बड़ा और है। वह यह कि वेश्या रंगमंच और महफ़िलों में भी जाकर नाच-गा सकती है, किंतु गीशा ऐसा नहीं कर सकती। वे कुछ अंतरंग और थोड़े मित्रों के सामने ही नाचें-गाएँगी।

गीशा-जाति की उत्पत्ति शायद पुरुष और स्त्रियों के अबाध संसर्ग के लिये ही हुई थी। पहले जापान में भी, भारत की तरह, पुरुष और स्त्रियाँ एक-दूसरे से मिल न सकती थीं। स्त्रियाँ पुरुषों से अलग रहती थीं। शायद उसी दोष को मिटाने के लिये गीशा-जाति की उत्पत्ति की गई हो, जिससे पुरुष और स्त्री दोनो स्वच्छंद, अबाध रूप में, मिल सकें, और नारियों को स्वतंत्र वायु-मंडल में पलकर उनके स्वाभाविक गुणों को प्रस्फुटित होने का अवसर दिया जाय। उस समय गीशा-जाति से पुरुष उतनी ही स्वाधीनता से मिलते थे, जितनी स्वतंत्रता से आजकल वे आपस में मिलते-जुलते हैं। 'मिकाडो' के पर्दा के साथ-साथ स्त्रियों का भी पर्दा उठा दिया गया है।

पुरुष-जाति उन पर भगिनी-जैसा स्नेह रखती थी, और यदि कभी-कभी किसी पुरुष और गीशा में प्रेम भी हो जाता, तो वे लोग विवाह-सूत्र में बँध जाते थे। उनके इस विवाह को कोई हीन दृष्टि से न देखता था, समाज में उनके लिये स्थान था। कभी-कभी ऐसे भी उदाहरण मसाने आए हैं, जहाँ पर कई एक गीशा के विवाह बड़े ही सम्मानित

और धनी-मानी कुल में हुए हैं। इस भाँति निर्धनी, किंतु सुंदर और गुणवान् स्त्री को भी अच्छे सुसंपन्न कुल में विवाह करने का अवसर मिल जाता था। साथ-ही-साथ एक आश्चर्य की बात और है। वह यह कि पुरुष-जाति सदैव से स्वार्थी और कुटिल रही है, उसने सदैव स्त्रियों की उन्नति में रोड़े अटकाए हैं, किंतु न-जाने क्यों इस जाति को उन्नत करने की चेष्टा की गई है। पुरुष सदा से संकीर्ण विचारवाला और सच्चरित्रता का ढोंग रखनेवाला है। उसकी हृदय-संकीर्णता न-जाने क्यों इस जाति के विषय में दूर हो गई। यही आश्चर्य है। जापान में इस जाति को विशेष रूप से प्रोत्साहन मिला है, क्योंकि गीशा उनकी निज की संपत्ति है। किंतु और देशों में भी इस जाति को सदैव से प्रतिष्ठा मिलती चली आई है। जापान के विषय में तो यहाँ तक कहा जा सकता है कि जो कुछ भी उन्नति जापानी स्त्रियों की हुई है, उसका सब श्रेय इसी जाति को है। उन्होंने ही उन्नति का बीज अपनी स्त्री-जाति में रोपा है। उनके आचार, विचार और सभ्यता का अनुकरण करके ही जापान की स्त्रियों की उन्नति हुई है।

इस जाति के चरित्र के विषय में भी कुछ कहा जा सकता है। अधिकतर वे अपने चरित्र पर दृढ़ नहीं रहतीं। इसके भी कई कारण हैं। साधारणतया वे लोग अपना जीवन निष्कलंक व्यतीत करने का विचार और चेष्टा करती हैं, किंतु स्वार्थी पुरुष उन्हें बहुत ज़्यादा प्रलोभन देते हैं। कभी-कभी तो विवाह करने का वचन भी दे देते हैं। वे उनके मीठे वचनों पर भरोसा करके फिसल जाती हैं, और जहाँ एक बार मनुष्य अपने चरित्र से फिसला, फिर उसके लिये निस्तार नहीं। उत्थान और पतन में केवल एक ही पग का तो अंतर है। दोनो के बीच में एक ही छोटी-सी तो रेखा है। एक ओर तो चरित्र-बल है, दूसरी ओर पतन! यदि मनुष्य एक बार भी रेखा के दूसरी ओर चला गया, फिर सिवा उसी ओर रहने के इस ओर नहीं आ सकता।

आ सकता है, किंतु बड़ी ही तपस्या, संयम और नियम के साथ रहने से ! क्योंकि पाप के प्रलोभन दूर ही से अपनी ओर खींचते रहते हैं। एक बार पतित होकर स्त्रियाँ पाप-मार्ग की ओर अग्रसर होती जाती हैं। एक बार अपने सरल विश्वास करने का फल पाकर वे पुरुष-जाति की घोर शत्रु हो जाती हैं, और अपने रूप-लावण्य के बल से उन्हें अपने समीप घसीटकर उन्हें जलाकर नाश करना आरंभ करती हैं। यह सत्य है कि वे अपने गुणों के साथ अपना शरीर भी बेचती हैं, निश्शंक होकर मदिरा-पान करती हैं, और उसके आवेश में घोर-से-घोर पाप करने में कुंठित नहीं होतीं। किंतु इसके उत्तरदायी कौन हैं ? क्या वे अकेली ही पाप की भागिनी हैं, उन्हें रसा-तल की ओर ले जानेवाली पुरुष-जाति नहीं ? गीशा या वेश्या से अधिक अपराधी वे पुरुष हैं, जो प्रलोभन देकर उनके साथ अपनी पाशविक प्रवृत्ति शांत करते हैं।

साथ-ही-साथ 'चायघर', 'र्योरी—या' अथवा 'होटल' और 'गीशा-घर' के संबंध में भी कुछ कहना उचित होगा। जिस प्रकार हमारे देश में, प्रत्येक नगर में, वेश्याओं के रहने का स्थान नियत होता है, उसी प्रकार जापान में भी है। वहाँ पर भी कुछ मुहल्ले नियत हैं, जहाँ गीशा रहती हैं। इस प्रथा से उनको और उनके प्रेमिकों, दोनो को सुविधा होती है। एक ही स्थान पर होने से उनका सहज ही में पता लगाया जा सकता है, और होटल के नौकर-चाकर उन्हें सरलता से बुला ला सकते हैं, इधर-उधर अधिक भटकना नहीं पड़ता।

जिन घरों में गीशा रहती हैं, उनकी रजिस्ट्री होती है, और नियमानुसार उन्हें अपना व्यवसाय चलाने की राज्य से अनुमति भी लेनी पड़ती है। इन घरों के स्वामी, कभी-कभी किसी सुंदरी किंतु निर्धन गीशा को, जिसका व्यवसाय वे चलने लायक़ देखते हैं, आभूषणों

और कपड़ों के लिये रुपया उधार देते हैं। जब तक वे ऋण चुकाती नहीं, वे एक तरह से उन्हीं की संरक्षकता में रहती हैं। जो कुछ वे उपार्जन करती हैं, उसकी एक पत्ती उन्हें भी मिलती है। जब गीशा अपना ऋण अदा कर देती है, तब वह स्वतंत्रता-पूर्वक उसी घर में या दूसरे घर से अपना व्यवसाय चला सकती है। कभी-कभी तो घर के मालिक कई महीनों तक उनका भरण-पोषण भी करते हैं, और जब उनका व्यवसाय चल निकलता है, तो वे लोग सब वसूल कर लेते हैं।

गीशा की फ़ीस घंटों की दर से नियत होती है। वे लोग जब कभी जहाँ बुलाई जाती हैं, तो उन्हें घंटों के हिसाब से उनकी फ़ीस दी जाती है। इस फ़ीस में किसी का भी साझा नहीं रहता। किंतु फ़ीस के अतिरिक्त और जो कुछ मिलता है, उसमें उनके संरक्षकों की एक पत्ती रहती है। गीशा जब ऋण से मुक्त हो जाती है, तो उसकी आय पर किसी का भी अधिकार नहीं रहता। यदि कोई गीशा एक नया घर लेकर रहती है, तो उसकी भी सरकार में रजिस्ट्री करवानी पड़ती है। जो गीशा सुंदरी होती है, उसका व्यापार थोड़े ही काल में चल निकलता है, और वह शीघ्र ही अपने ऋण से मुक्त हो जाती है, तथा अपने अधीन दो-तीन गीशाओं को रख लेती है। इस कहानी की नायिका सूया भी, इसी प्रकार, एक घर और चार-पाँच गीशाओं की स्वामिनी होकर, बड़ी सफलता से अपना व्यवसाय चलाती है।

'चाय-घर' से यह समझना कि वहाँ जाकर लोग चाय पीते हैं, ग़लत है। 'चाय-घर' गीशाओं से मिलने के अड्डे हैं। जब किसी होटल में उनके बुलवाने का प्रबंध किसी कारण-वश नहीं हो सकता, तो उन्हें चाय-घरों में बुलवाते हैं। चाय के स्थान पर बोतलों की चाय पान की जाती है। जापान का कोई भी चाय-घर उनसे ख़ाली नहीं। यह कहना कुछ भी अतिशयोक्ति न होगा कि चाय-घरों की सारी आय उन्हीं के द्वारा होती है।

गीशा के दलाल को जापानी भाषा में 'कोमबान' कहते हैं। इनका वही काम है, जो इस देश में वेश्याओं के दलालों का होता है। वे मनचले धनिकों से उनके रूप-गुण की प्रशंसा करते हैं, उनका भाव पटाते हैं, और चाय-घरों में उन्हें ले जाते हैं, और फिर उन्हें पहुँचा भी आते हैं। वे एक प्रकार से गीशा के पथ-प्रदर्शक और शरीर-रक्षक होते हैं। इस कहानी के चरित-नायक शिनसुकी को भी एक बार 'कोमबान' का वेश धारण करना पड़ा था, जब शिनसुकी सूया को लेने के लिये आशीज़ावा के घर मुकाजीयाँ में गया था।❀

इस कहानी में सूया की उत्कंठा गीशा जाति के प्रति प्रदर्शित की गई है। वह उन्हीं के-से वस्त्र पहनती है, उन्हीं की तरह अपने बाल बाँधती है, और उन्हीं की भाषा में बोलने का यत्न करती है। यह सब स्वाभाविक है। संभव है, हमारे देशवासियों को यह अनुचित जान पड़े, किंतु जापान में यह विस्मयकर नहीं। प्रायः सभी जापानी स्त्रियों की रुचि इस जाति की ओर रहती है। फ़ैशन के परिचालक और नवीन वेश-भूषा के आविष्कारक, चाहे किसी भी जाति के मनुष्य हों, सबके पूज्य होते हैं, और सब लोग उनका अनुकरण करते हैं। इस व्यवसाय की ओर सूया की अभिरुचि उसके स्वाभाविक गुणों के कारण थी। उसमें चंचलता, तीव्रता, सौंदर्य, गुण और सबसे बड़ी बात स्वाधीन होने की लगन थी। इन्हीं सब कारणों से गीशा के प्रति अनुरक्ति होना स्वाभाविक ही है। इसके पश्चात् जब सूया गीशा हो गई, तो उसकी सफलता ने उसे बिल्कुल मदमत्त करके अंधा कर दिया। उसी सफलता के जोश में वह विलास-सागर में नीचे उतरती गई, यहाँ तक कि उसके भँवर में पड़कर वह अपनी और शिन-सुकी की आत्मा ले डूबी। उसके जीवन में पग-पग पर पाप के इतने भयंकर आकर्षण थे, जिनसे वह किसी प्रकार भी अपने को मुक्त न

❀ देखो चतुर्थ खंड

कर सकती थी। वह उस समय असहाय थी। यदि शिनसुकी उसका कर्णधार रहता, तो शायद उसका पतन न होता। शिनसुकी उसे तब मिलता है, जब उसे पाप का मज़ा मिल जाता है। वह अपनी सफलता के आवेश में फूली नहीं समाती। उस समय उसे यह नहीं विदित था कि जिसे वह अपने जीवन का शृंगार समझती है, वही उसके जीवन का काल-रूप है। जिस प्याले का वह अमृत समझकर पान कर रही थी, वह तो हलाहल विष का प्याला है। उसके रूप की प्रशंसा चारो ओर हो रही थी, बड़े-बड़े उन्नत सिर उसके चरणों पर नत हो रहे थे। 'सुरुगाया' के एकांत-वास को छोड़ रँगीले संसार की वह अभिनेत्री हो रही थी। उसकी एक प्रेम-दृष्टि को अपनी ओर आकर्षित करने के लिये लोग लाखों की संपत्ति ख़र्चने को तैयार थे। फिर यदि अज्ञात बालिका उनके प्रलोभनों में पड़कर पाप-मार्ग की ओर निरशंक जाय, तो क्या आश्चर्य ? जिस मार्ग से चलकर वह रानी हो सकती थी, उसी में एक ऐसा गह्वर भी था, जिसमें गिरकर मनुष्य अपना जीवन खो बैठता है। सूश्रा उसी गड्ढे में गिर पड़ी। किंतु गिरते हुए भी उसके मुख पर एक मृदु हास्य था, और बुलबुल की तरह मरती हुई वह किसी के प्रेम का गीत गा रही थी। उसका जीवन एक सुमधुर सौरभमय पुष्प की तरह, जिसके सौरभ से 'येदो' मुखरित हो उठा था, निष्ठुर कामासक्त दुराचारियों की निर्दयता से तोड़-मरोड़-कर नष्ट कर दिया गया था, फिर भी वह अपनी स्वर्गीय सुरभि को बखेरती हुई न-मालूम किस अनजान देश की ओर चली गई।

प्रतापनारायण श्रीवास्तव

पूज्य गुरुवर

पं० जगमोहननाथ चक बी० ए०, बार-ऐट-लॉ

डीन ऑफ़् दी फ़ैकल्टी ऑफ़् लॉ

लखनऊ-विश्वविद्यालय

के श्रीचरणों में सादर

भेंट

विनीत

प्रतापनारायण श्रीवास्तव

पाप की ओर

प्रथम खंड

रात के लगभग दस बज चुके होंगे जब कि नशे में झूमता हुआ एक मल्लाह एक महाजन के घर 'सुरुगाया' में आया। उसने अपनी जेब खनखनाई, जो रुपयों से भरी हुई मालूम होती थी, और दो चाँदी के सिक्के बाहर निकालकर देते हुए, अपने वे कपड़े माँगे, जो आज से तीन महीने पहले बंधक रख गया था। नए वर्ष का त्योहार सिर पर था, इसीलिये उसे कपड़े छुड़ाने की चिंता थी।

उसके चले जाने के बाद 'सुरुगाया' फिर निस्तब्ध हो गया। इस निस्तब्धता का कारण था, सहसा आशातीत तुषार-पात! शिनसुकी, इसी दूकान का कर्मचारी, अपना सिर हाथों के सहारे झुकाकर पढ़ने का यत्न करने लगा, किंतु पढ़ने में उसका मन न लगा। क्योंकि पुस्तक अच्छी न थी, किसी अच्छे लेखक की लिखी हुई न थी। सरदी से उसकी उँगलियाँ ठिठुरी जा रही थीं। पास ही रक्खी हुई अँगोठी की अग्नि भी बुझी जा रही थी, क़रीब-क़रीब बुझ ही गई थी। उसने कोयलों को उक-साया, जो अपने लाल शरीर को सफ़ेद राख के भीतर छिपा

रहे थे। फिर हाथ बढ़ाकर, दो तीन हाथ की दूरी पर बैठे हुए नौकर के कान खींचकर सजग किया, जो सरदी से ऐंठता हुआ सोने का प्रयत्न कर रहा था। शोटा आँख मलता हुआ उठा, और भौचक्का होकर शिनसुकी की ओर देखने लगा।

शिनसुकी ने कहा—"शोटा, उठा। क्या आराम से पड़ा सो रहा है। तुझे याद है कि मैंने अभी तक कुछ खाया नहीं है, और न मैं दूकान छोड़कर आज घर ही जा सकता हूँ, क्योंकि अभी तक सेठजी नहीं आए, और शायद आवें भी नहीं। तू दौड़कर मेरे लिये मुरामाटसूचो ॐ से दो प्याले गरम सिपइयों के और थोड़ी-सी तली हुई मछली ले आ। अपने लिये भी इच्छानुसार कुछ ले आना।" यह कहकर शिनसुकी ने शोटा को एक चाँदी का सिक्का दे दिया।

शोटा रुपया पाकर प्रसन्न हो खड़ा हो गया। उसने कृतज्ञतापूर्ण नेत्रों से शिनसुकी की ओर देखते हुए कहा—"बहुत ठीक, जाग जाने पर अब तो सरदी और भूख, दोनो दुश्मन सताने लगे। अभी-अभी दोनो चीजें दौड़कर लिए आता हूँ। अच्छा तो है, सेठजी के आने के पहले ही अगर हम लोग भी खा-पीकर कुछ गर्म हो जायँ।"

ॐ "चो" का अर्थ है मार्ग, लेकिन प्रायः किसी ख़ास जगह या मुहल्ले या घर को बतलाने के लिये इस्तेमाल किया जाता है। जैसे आर्यसमाज-मंदिर-मार्ग को जापानी कहेंगे आर्यसमाज-मंदिर चो।

यह कहकर शोटा उठा और बरसाती ओढ़कर प्रसन्न-मन से घर के बाहर चला गया।

उसके जाने के बाद शिनसुकी उठा, और मेज़ पर की बिखरी हुई चीज़ों को यथा-स्थान रखने लगा। तिजोरी में ताला लगाया, और सड़कवाला बड़ा दरवाज़ा भीतर से बंद कर दिया। आज शाम को, जब शिनसुकी के सेठ सपत्नीक किसी मित्र के यहाँ शोक तथा सहानुभूति और समवेदना प्रकट करने के लिये जा रहे थे, तो कह गए थे—"हम लोगों को लौटने में शायद देर हो जाय, या शायद आज आना ही न हो, कल सबेरे तक आवें। इसलिये तुम सब दरवाज़े अच्छी तरह बंद करके होशियारी से यहाँ रहना।"

रात के ग्यारह बजनेवाले थे। बाहर भीषण तुषार-पात हो रहा था। अब उनके लौटने की संभावना नहीं थी। शिनसुकी, उनकी आज्ञानुसार, सब दरवाज़े बंद हैं या नहीं, देखने के लिये हाथ में लालटेन लेकर चल दिया। जब वह ऊपर के सब दरवाज़े बंद करके नीचे आ रहा था, तो लालटेन का प्रकाश दो दासियों के मुख पर पड़ा, जो सामने ही अपने को गद्दों से ढाके हुए आराम से सो रही थीं। उसने उनके पास आकर कहा—"ओ-तामी-डान * क्या तुम लोग सो गई हो ?"

* "ओ—तामी डान" किसी को अपनी ओर आकर्षित करने का शब्द है। "ओ" आदर-सूचक शब्द है, जो प्रेमी अपनी प्रेमिका के लिये व्यवहार करता है। "डान" शब्द नौकरों के नाम के बाद लगाया जाता है, तथा नौकर भी आपस में जब किसी नौकर का नाम लेते हैं, तो "डान" शब्द लगा देते हैं। "तामी" उनमें से किसी एक का नाम था।

लेकिन किसी ने कुछ भी उत्तर न दिया और वे नींद में बे-होश पड़ी रहीं।

शिनसुकी कोई उत्तर न पाकर, दबे पैरों घर का बड़ा कमरा पारकर दूसरी ओर के बरामदे का दरवाज़ा बंद करने के लिये जाने लगा। लकड़ी का फ़र्श भी बरफ़-जैसा ठंडा हो रहा था। शिनसुकी के पैर कटे जा रहे थे। बड़े कमरे के बाद बरामदा था, और उसके बाद एक छोटा-सा बाग़। बरामदे का एक दरवाज़ा बाग़ में खुलता था। केवल यही द्वार बंद करना शेष रह गया था।

बरामदे के एक सिरे पर एक कमरा था, जो घर के सब कमरों से उत्तम था। नए फ़ैशन से सजा हुआ था, और आनंद तथा भोग-विलास की सभी चीज़ों से भरा था। एक कोने में एक बड़ी-सी ताँबे की अँगीठी रक्खी हुई थी, दीवारों पर रंग-बिरंगी चिकें पड़ी हुई थीं, कई बड़ी-बड़ी तस्वीरें भी खूँटियों के सहारे टँगी हुई थीं। फ़र्श पर अच्छा मोटा क़ालीन बिछा हुआ था। एक ओर दो मसहरीदार पलँग पड़े थे, जिन पर रेशमी गद्दे बिछे थे। यह कमरा शिनसुकी के सेठ का था।

शिनसुकी के सेठ यद्यपि अपनी स्त्री के साथ गए थे, लेकिन फिर भी भीतर आलोक हो रहा था, जो दराज़ों से निकलकर बाहर की भयानक शीत को दूर करने का यत्न कर रहा था। सेठ और सेठानी की अनुपस्थिति में, आज उनको एकमात्र

संतान 'सूया' ने उस पर अपना अधिकार जमाया था। सूया इस समय उस कमरे में सो रही थी।

शिनसुकी बरामदे से उस कमरे की ओर देखने लगा। उसने धीरे-धीरे अपने आप कहना शुरू किया—"आह! वह कमरा कितना गर्म होगा। इसमें ज़रा भी जाड़ा न लगता होगा, और मैं...?" शिनसुकी आगे न सोच सका। उसकी हेय दशा का चित्र उसकी आँखों के सामने फिर गया। उसकी आँखों से डाह और ईर्षा निकलने लगी। वह चुपचाप उस कमरे से निकलते हुए प्रकाश की ओर देखने लगा।

वह सूया का प्रेमी है। सूया से प्रेम करते हुए आज उसे पूरा एक वर्ष समाप्त हो गया। पर साल आज ही कल के दिन थे, जब सूया का नयन-बाण पहलेपहल उसके हृदय में बिंधा था। और शिनसुकी की सुंदरता ने भी सूया के दिल पर असर डाला था। सूया ने भी उसके प्रेम के प्रत्युत्तर में अपना सब कुछ उसके चरणों पर निछावर कर दिया था। किंतु इस पर भी शिनसुकी दुखी था, क्योंकि दोनों का मिलन—पति-पत्नी होकर अबाध मिलन—असंभव था। सूया अपने मा-बाप की अकेली संतान थी, बड़े अच्छे कुल और धनी घर की लड़की थी, और शिनसुकी एक निर्धन और अख्यात वंश का था। यदि वह भी किसी अच्छे और धनी वंश का होता, तो सूया के पाणिग्रहण का अधिकारी हो सकता था। वह सूया को अपनी कहकर पुकार सकता था, किंतु इस

अवस्था में उसे सूया को अपनी कहने का कोई अधिकार न था।

अर्ध रात्रि की शीतल वायु आज के तुषार-पात से और अधिक ठंडी होकर बड़े वेग से बह रही थी। बरामदे में शिन-सुकी खड़ा हुआ काँप रहा था। उसका पोर-पोर निर्जीव होकर ऐंठ गया था। उसका दाहना हाथ, जिसमें लालटेन थी, शीत से ऐंठकर दर्द करने लगा था। उसने अपना बायाँ हाथ अपने वस्त्र की भीतरी जेब से बाहर निकाला, और उससे लालटेन थाम-कर मुँह की भाप से दाहने हाथ को गरम करने का यत्न करने लगा। उसके पैर इतने ठंडे हो गए थे कि जब एक दूसरे से छू जाते, तो उसे ऐसा मालूम होता कि वे पैर उसके नहीं, बरन् किसी दूसरे के हैं। शिनसुकी एँड़ी से चोटी तक काँप रहा था, लेकिन उसके इस कंपन का कारण केवल भयानक शीत न होकर कुछ और भी था—अपनी दुरवस्था की भयानक दशा।

शिनसुकी के पैर धीरे-धीरे उठे, और वह उस कमरे के पास से दूसरी ओर जाने लगा। उसके पद-शब्द सुनकर सूया ने पुकारकर कहा—"शिनडान, क्या तुम हो?"

सूया ने लालटेन की बत्ती बढ़ा दी। प्रकाश की आभा अब काग़ज़ों को फोड़कर निकलने लगी।

शिनसुकी ने रुककर कहा—"हाँ, मैं ही हूँ। आज सेठजी के आने में संदेह है, शायद ही आवें। इसलिये उनकी आज्ञा-नुसार दरवाज़ों को बंद करने के लिये आया था।"

सूया ने कमरे के भीतर से कहा—"शायद आज भी घर जाना चाहते हो, क्यों ?"

सूया के स्वर में व्यंग्य का आभास था।

शिनसुकी ने उत्तर में कहा—"नहीं, आज यहीं रहूँगा। घर अकेला नहीं छोड़ सकता।"

शिनसुकी ने व्यंग्य समझकर भी नहीं समझा। उसने साधारण स्वर में उत्तर दिया।

शिनसुकी कमरे के बाहर खड़ा हुआ था। सूया ने द्वार खोलते हुए कहा—"बाहर बहुत ठंड है, भीतर चले आओ, और आकर किवाड़ बंद कर दो।"

शिनसुकी ने अंदर जाकर देखा कि सूया रेशमी गद्दे पर बैठी हुई अपने बिखरे बालों को सुलझाकर व्यवस्थित कर रही है। उसकी लंबी आम की फाँक-जैसी आँखें उसी की रूप-माधुरी अतृप्त वासना के आवेग से पान करने के लिये उता-वली हो रही हैं। युवक भी उस रात्रि को विशेष रूपवान् प्रतीत होता था।

सूया ने अपनी नजर नीची करते हुए पूछा—"अब तो शायद सब नौकर सो गए होंगे ?"

शिनसुकी ने उत्तर दिया—"नहीं, मैं शोटा की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। मैंने उसे एक काम से भेजा है, अब आने ही वाला है। आते ही उसको सोने के लिये भेज दूँगा, और तब तक तुम......"

सूया ने अधीर होकर कहा—"हाँ, तब तक मैं धैर्य धरूँ, क्यों ? धैर्य, धैर्य, हमेशा धैर्य। कब तक मैं धैर्य धरे रहूँ। अब और असहनीय है। आज ही तो स्वर्ण-सुअवसर मिला है। मैं इससे अवश्य लाभ उठाऊँगी ! शिनडान, अब तो तुमने सब सोच-विचारकर ठीक कर लिया होगा। क्यों, तैयार हो न ?"

सूया लाल मखमली कपड़ों में बड़ी सुंदरी देख पड़ती थी। उसके छोटे-छोटे सुंदर पैर उसकी शोभा को द्विगुणित कर रहे थे। वह प्रार्थना-भरी आँखों से उसकी ओर देख रही थी।

शिनसुकी ने सरलता-पूर्वक कहा—"मैं तुम्हारा आशय नहीं समझा !"

शिनसुकी के सामने रूप और सौंदर्य की वह राशि थी, जो साल-भर से उसे पागल कर रही थी। उस सौंदर्य-धारा में वह शक्ति थी, जो उसे बहा ले जाने के लिये आगे बढ़ रही थी। शिनसुकी भी निरुपाय होकर बहा जा रहा था। शिशु-जैसी सरलता से आँख भरकर उसने सूया की ओर देखा, और वह बात सुनने के लिये तैयार हो गया, जिसे कहने में वह असमर्थ था।

सूया ने कातर स्वर में कहा—"आओ, आज ही हम दोनो 'फूकागावा' भाग चलें। यही मेरी प्रार्थना है। मेरी ओर देखो, क्यों मेरी बात न मानोगे ?"

शिनसुकी ने उमड़ते हुए आवेग को दबाते हुए कहा—"यह असंभव है।"

शिनसुकी ने कह तो दिया; लेकिन उसका हृदय भीतर-ही-भीरत काँप रहा था। उसके विचार की दृढ़ता शिथिल हो रही थी। इस जादू-भरी प्रबल शक्ति से छुटकारा मिलना कठिन ही नहीं, असंभव है। जब वह इस परिवार में पहलेपहल आया था, उसकी आयु केवल चौदह साल की थी, उसने अब तक ईमानदारी और सत्यता से जीवन-निर्वाह किया है। उसके ऊपर उसके स्वामी का अटल और दृढ़ विश्वास है—इतना विश्वास, जितना किसी भी युवा नौकर का नहीं किया जा सकता। दो-एक साल बाद उसका स्वामी उसे अलग दूकान करवा देगा, और यद्यपि उसे सूया नहीं मिलेगी, किंतु और तरह से तो वह सुखी हो सकता है। उसके जीवन की दूसरी आशाएँ तो पूरी होंगी। उसके वृद्ध माता-पिता को तो अकथनीय आनंद प्राप्त होगा—उनकी वर्षों की कामना फलेगी। अभी जिसे वह स्वप्न समझ रहे हैं, वही सत्य होकर सामने आ जायगा। अपने स्वामी की एकमात्र कन्या के साथ ऐसा दुराचरण और विश्वासघात! नहीं, ऐसा कठिन पाप वह कभी नहीं कर सकता, और न करेगा।

सूया ने व्यथित स्वर में कहा—"क्यों शिनडान, तुम अपनी प्रतिज्ञा भूल गए! हाँ, अब कुछ-कुछ मेरी समझ में भी आने लगा है। तुमने मुझे अपने खेलने का खिलौना बना

रक्खा है। अब जब बातें इतनी दूर तक पहुँच गई हैं, तो मुझे ठुकराकर दूर कर देना चाहते हो। यह तो साफ़ ही है, बिल्कुल साफ़।"

शिनसुकी ने रुकते हुए कंठ से कहा—"नहीं, यह बात नहीं है। तुम्हारा अनुमान असत्य है।"

सूया की आँखों से हृदय की व्यथा पानी होकर बाहर निकलने लगी। वह उसकी पीठ पर हाथ फेरकर शांत करने के लिये आगे बढ़ा। इसी समय किसी ने बाहरी दरवाज़ा बड़ी ज़ोर से खटखटाया। शिनसुकी चौंककर वहीं खड़ा रह गया।

उसने घबराए हुए स्वर में कहा—"ठहरो, मैं अभी आकर फिर बातें करूँगा। शोटा को सोने के लिये बिदा करके मैं अभी-अभी आता हूँ। अगर तुम भागने के लिये ही तुली हो, तो एक बार फिर मैं इस प्रश्न पर विचार करूँगा। और......"

सूया ने उसका हाथ पकड़ लिया था, किसी भाँति भी जाने न देना चाहती थी। शिनसुकी ने किसी तरह अपने को उसके कर-पाश से छुड़ाया और भागकर बड़े कमरे में आकर दम लेने के लिये कुछ देर ठहर गया। फिर स्वस्थ-चित्त होकर द्वार खोलने के लिये आगे बढ़ा।

किवाड़े खुलते ही शोटा तीर की तरह भीतर घुसा, और चिल्लाकर कहा—"अरे, मैं तो अच्छा-खासा बर्फ़ का एक टुकड़ा हो गया हूँ। बाप रे! बड़ा जाड़ा है।"

फिर थोड़ी देर बाद स्वस्थ होकर कहा—"शिनडान, बाहर बर्फ़-ही-बर्फ़ है, मालूम होता है, आज रात को बर्फ़ का तूफ़ान आवेगा।"

× × ×

शोटा को खाते ही नींद लगने लगी। खाकर सीधा अपनी चारपाई पर जाकर लिहाफ़ के अंदर सिकुड़कर लेट गया। और क्षण-भर में सो गया। बाहर हवा बंद हो गई थी और बर्फ़ अब भी गिर रही थी। रास्ता बिल्कुल सुनसान था। शिन-सुकी ने अँगीठी में और कोयले डालकर अग्नि प्रज्वलित की। जब आग जलने लगी, वह वहीं पर स्टूल डालकर बैठ गया और अपनी चिंता में डूब गया।

उसका मन-तुरंग बार-बार उस छोटे सजे हुए कमरे की ओर दौड़ रहा था, जहाँ की अधिष्ठात्री उसकी प्राणोपम सूया थी—और वह भी आकुल हृदय से उसका पथ निरख रही होगी। सूया की आँखों में नींद न होगी, और वह प्रतिक्षण ज़रा-सी आहट पर अपने कान खड़े करती होगी। इसी तरह के विचार उसके स्मृति-मंदिर में सजीव होकर दौड़ रहे थे।

शिनसुकी इस समय अपने भाग्य-विधाता के हाथों बंदी था। किंतु कुछ ही देर में मनुष्य जिसे भाग्य-विधान कहते हैं, उसके हाथों से नष्ट-भ्रष्ट हो जायगा। आज ही उसके भाग्य का निर्णय हो जायगा—वह बली है या भाग्य! उसकी उन्नति और भाग्य की लड़ाई है—कौन जानता है?

शिनसुकी ने चौंककर बरामदे की ओर देखा। किसी की अस्फुट पद-ध्वनि साफ़ सुनाई पड़ती थी। शिनसुकी शीघ्रता से सूया के कमरे की ओर चला—क्योंकि अगर सूया वहाँ आ जायगी, तो बेहद नाराज़ होगी और उसकी बक-झक से नौकर सजग हो जायँगे, जिससे शिनसुकी बचना चाहता था। शिनसुकी और सूया बरामदे ही में मिल गए।

शिनसुकी को देखकर सूया ने पहला प्रश्न किया—"शिन-डान, तुम तैयार हो न? मैं अपने साथ इतना रुपया ले आई हूँ, जो हम लोगों को यहाँ से दूर ले जाने के लिये काफ़ी होगा। लो, अपने पास रक्खो।"

यह कहकर सूया ने अपनी जेब से पीले रेशम की थैली निकालकर शिनसुकी को दे दी। शिनसुकी ने खोलकर देखा—उसमें सोने के दस सिक्के * थे।

शिनसुकी ने काँपते हुए हाथों से कहा—"तुम्हारे साथ-साथ मैं दूसरे का रुपया भी चुराऊँ? इससे बढ़कर और कौन दूसरा पाप होगा। ईश्वरीय प्रतिशोध विकट होगा।"

किंतु सूया की कुंचित-भ्रू देखकर उसका तर्क-वितर्क आगे न बढ़ सका।

---

* सोने के सिक्कों का मूल्य कभी भी कुछ ठीक नहीं रहा है, और भिन्न-भिन्न राज्य-काल में भिन्न-भिन्न सिक्के प्रचलित किए जाते थे। उस समय सबसे अधिक मूल्यवान् सोने के सिक्के का नाम 'रिमों' था, जो सौ 'चेन' के बराबर था।

थोड़ी देर बाद शिनसुकी ने फिर कहा—"बाहर बर्फ़ गिर रही है। मैं तुम्हारे लिये चिंतित हूँ—तुम भला कैसे फूकागावा तक पैदल चल सकोगी। सूचान, ईश्वर * के लिये तुम थोड़े दिन और धैर्य धरो, ईश्वर की कृपा से कभी-न-कभी फिर कोई अवसर हाथ आवेगा ही।"

"फूकागावा" से उनका तात्पर्य था 'फूकागावा' के एक मुहल्ले 'ताकावाशी' में रहनेवाले एक मल्लाह से, जिसका नाम था सीजी। सूया के पिता सीजी पर विशेष कृपा करते थे, और जब कभी जल-विहार करने के लिये जाते, तो सीजी की ही नावों पर। सीजी का आज से दस वर्ष पहले इस परिवार के साथ परिचय हुआ था, जब सूया के पिता सपरिवार 'शिनागावा' क़िले के नीचे जल-विहार करने गए थे। इसके बाद अक्सर भ्रमण और जल-विहार करने के समय भेंट हो जाती, और सीजी अपने दूसरे ग्राहकों की परवाह न करके, पहले इनको नाव पर बिठाकर घुमा लाता था। सीजो प्रत्येक नूतन वर्ष और बान † की छुट्टियों के पहले आता, और जल-

---

* 'चान' प्यार का शब्द है, जो प्रेमी प्रेमिका के लिये इस्तेमाल करता है। 'सू' सूया का आधा नाम है, जैसे, 'शिन' शिनसुकी का। प्रेम के कारण पूरा नाम न लेकर आधा ही नाम पुकारते हैं।

† 'बान' जापानियों का एक त्योहार है, जो वर्ष के सातवें महीने में मनाया जाता है। जैसे हमारे देश में, आश्विन-मास में, पितृ-पक्ष होते हैं, वैसे ही जापान में 'बान' होता है। जापानियों का विश्वास

विहार आदि के लिये निमंत्रण दे जाता। जब वह आता, तो रसोई-घर के एक कोने में बैठकर सूया की प्रशंसा के पुल बाँध देता। वह कहता—"किसी उत्कृष्ट चित्रकार की सबसे मनोरम सुंदरी की सुंदरता से भी श्रेष्ठ सुंदरता हमारी छोटी रानी की है। दूसरे लोग चाहे जो कहें, लेकिन मेरी समझ में तो यह अपना सानी नहीं रखती। शहर-भर की सुंदरियों की यह रानी है। माफ़ कीजिएगा, अगर हमारी रानी गीशा ❀ होती, तो मैं अवश्य इनके सत्संग का आनंद उठाता। पचास वर्ष का बुड्ढा भी हो जाता, तो भी कभी न चूकता।"

सीजी इसी प्रकार कहते-कहते सूया की बाँह पकड़ लेता और कहता—"ओ—सूचान, मेरे जीवन की साध पूरी करो। लाओ, अपने हाथ से एक प्याला ढालकर पिला दो—सिर्फ़ एक प्याला मैं पीकर असीम तृप्ति अनुभव करूँगा।"

है कि उन दिनों उनके पूर्व-पुरुषों की आत्माएँ अपने पुराने परिवार में आती हैं। किंतु शिक्षा की उन्नति के साथ-साथ यह विचार और भ्रम दूर हो गया है। 'बान' अब केवल अर्ध वर्ष की समाप्ति का त्योहार मनाया जाता है। इस अवसर पर एक दूसरे को भेट दी जाती है। यदि छोटे आदमी अपने से बड़ों को भेट देते हैं, तो वे लोग कुछ बख़शीश देकर भेट स्वीकार करते हैं। नव वर्ष, और बान दोनो जापानियों के मुख्य त्योहार हैं, जिनमें वे लोग ख़ूब आनंद मनाते हैं।

❀ 'गीशा' जापान में ऊँची श्रेणी की वेश्या को कहते हैं। गीशा का विशेष हाल अनुक्रमणिका में देखो।

सीजी की बातें सुनकर परिवार के अन्य लोग हँसते और उसकी बेवक़ूफ़ी-भरी बातों पर प्रसन्न होते थे। *

सीजी का व्यापार था लोगों को घुमाना। घूमनेवाले अधिकतर धनी समाज के लोग होते थे, जिनके साथ उसके जीवन का अधिक भाग बीतता था। वह उन्हें "यनागीबाशी", "फूकागावा", "सन्या", "योशीवारा" आदि रमणीक स्थानों में घुमाने ले जाया करता था। सीजी तरह-तरह आदमियों के सत्संग से मानव-प्रकृति भली प्रकार समझ गया था। प्रेमियों की नज़र उससे छिपती न थी। सीजी बहुत दिनों से उनके प्रेम की बात जानता था, लेकिन आज तक उसने किसी से उनका भेद प्रकट नहीं किया था, जो वास्तव में सीजी-जैसे बातूनी के लिये आश्चर्य की बात थी। एक दिन अचानक उसे मालूम हो गया कि शिनसुकी और सूया, दोनों प्रेम-पाश में बद्ध हैं।

---

* जापान में नीच श्रेणी के मनुष्य, जो मुँह लगे होते हैं, यदि ऐसी बातें करते हैं, तो उनकी बात पर लोग बुरा नहीं मानते, क्योंकि वे जानते हैं कि वे लोग परिहास से ऐसा कह रहे हैं। असंकीर्ण विचार और उत्फुल्लता, ये जापानियों के विशेष गुण हैं। वे अपने से नीच श्रेणी के मनुष्यों से घृणा नहीं करेंगे। उनके परिहास पर वे प्रसन्न होंगे, और उनकी प्रसन्नता में सहर्ष योग देंगे, क्योंकि वे लोग इसी प्रकार का मज़ाक़ कर सकते हैं, इसलिये कि वे मूर्ख और अपढ़ हैं। सीजी की ऐसी बेतुकी बातों का कुछ और अर्थ नहीं लगाया जाता था, और न उसके माता-पिता ही बुरा मानते, क्योंकि सीजी ये बातें परिहास में कहता था। वे लोग इसे सीजी की मूर्खता समझते थे, और उसकी बेवक़ूफ़ी पर हँसते थे।

आज से लगभग एक महीने पहले, एक दिन सूया के पिता कुछ मित्रों के साथ नाटक देखने जा रहे थे। उन दिनों नाटक १० बजे दिन से शुरू होते थे और रात के नौ-दस बजे तक समाप्त होते थे। यदि थिएटर-हाल दूर होता था, तो दर्शक सुबह से ही अपने घरों से चल देते थे। सूया के पिता भी सुबह ही से चल दिए थे। लेकिन सूया बीमारी का बहाना करके घर में ही रह गई। नाटक देखने की अपेक्षा वह शिनसुकी के साथ समय व्यतीत करना अधिक सुखमय समझती थी। सूया के पिता भी शिनसुकी के ऊपर दूकान और सूया की देख-रेख का भार देकर सपरिवार नाटक देखने चले गए। शिनसुकी ने शोटा को तो दूकान ताकने के लिये बिठा दिया, और स्वयं सूया के कमरे में जाकर उससे प्रेमालाप करने लगा। जब वे दोनों अपना अस्तित्व भूलकर प्रेम-देव की गोदी में छोटे-छोटे दो बालकों की भाँति खेल रहे थे कि अचानक सीजो उस कमरे में घुस आया। सीजी शिनसुकी को सूया के आलिंगन-पाश में बद्ध देखकर हँसा और बोला—"शिनडान, बधाई है। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह जोड़ी सदैव ऐसी ही भरी-पुरी और सुखी हँसती हुई दिखाई दे। तुम लोग समझते थे कि मैं तुम लोगों का प्रेम नहीं जानता। दुनिया में चाहे कोई दूसरा न जानता हो, लेकिन सीजो जरूर जानता था। मुझे बहुत दिनों से शक था, बहुत दिनों से तुम दोनों की प्रेम-अभिरुचि निरख रहा था। दुनिया चाहे

अंधी हो जाय, लेकिन मेरी आँखों पर पर्दा डालना असंभव है। मेरी बातों से यह मत समझना कि मैं किसी पर यह गुप्त भेद प्रकट कर दूँगा; नहीं, बल्कि मैं सदैव तुम्हारी सहायता के लिये तैयार हूँ। जब तुम लोगों का गुप्त प्रेम है, तो कभी-न-कभी किसी दूसरे मनुष्य की सहायता लेनी ही पड़ेगी, यदि कभी ऐसा अवसर आ पड़े, तो मुझे याद करना। तुम दोनो में अगर प्रेम न होगा, तो फिर किसमें होगा? जब एक अप्सरा-जैसी सुंदरी कामदेव-जैसे सुंदर पुरुष के साथ एक ही घर में रहती है, दोनो अविवाहित हैं, दोनो की उमंगें भीतर-ही-भीतर किलक रही हैं, तब भला कब तक प्रेम की आग न सुलगेगी? प्रेम न होना तो अवश्य विचित्र बात है, किंतु प्रेम होना जरा भी आश्चर्य का विषय नहीं। इसके अतिरिक्त मुझमें ख़ास बात यह है कि जब मैं दो प्रेमियों को कष्ट में देखता हूँ, तो उनकी जी-जान से सहायता करता हूँ—चाहे कैसी ही आपदाएँ मेरे ऊपर क्यों न आवें, मैं पीछे नहीं हटता। अपने सामर्थ्य-भर उनकी सहायता करूँगा, क्योंकि मैं हमेशा उन्हें सुखी देखना चाहता हूँ। बस, यही मुझमें एक विचित्र बात है।"

दोनो एक दूसरे का मुँह ताक रहे थे। सीजी की बातों से और उसके भाव-भंगी से तो यही विश्वास होता था कि वह उनका गुप्त प्रेम किसी पर प्रकट नहीं करेगा।

सीजी ने उनकी परेशानी देखकर सांत्वना-पूर्ण शब्दों में कहा—"जो मनुष्य प्रेम करता है, उसका हृदय भी मजबूत

होना चाहिए। भीत-हृदय होना शोभा नहीं देता। हर समय बुरी-से-बुरी घटना के लिये तैयार रहना चाहिए। प्रेम छिपाने से कभी नहीं छिपता, एक-न-एक दिन प्रकट होकर ही रहता है। मैं इस तरह तुम दोनो का कुढ़ना नहीं देख सकता। मैं क्यों न इस विवाह की चर्चा तुम्हारे मा-बाप से चलाऊँ और उन्हें समझा-बुझाकर यह विवाह करवा दूँ? मुझे विश्वास है कि कभी वे मेरी बात नहीं टालेंगे। तुम्हारा उपयुक्त वर शिनडान ही है, सूया। तुम दोनो की जोड़ी बड़ी भली जान पड़ती है। शिनडान देखने में जैसा सुंदर है, वैसा ही चतुर और गुणी भी है। तुम्हें वह हर तरह से सुखी करेगा। सच-मुच मुझे बड़ा आश्चर्य होगा, यदि तुम्हारे पिता मेरी बातों पर विचार न करेंगे, या मेरे प्रस्ताव का प्रत्याख्यान करेंगे।"

सूया ने मुँह फिराकर कहा—"यदि यही हो सकता, तो हम लोग स्वयं ही प्रस्ताव करते। आप हम लोगों के लिये इतना कष्ट न करिएगा।"

नवयुवक शिनसुकी ने सीजो से कहा—"हम दोनो का पति-पत्नी-रूप में मिलना असंभव है, क्योंकि सूया अपने पिता को उत्तराधिकारिणी है, और मैं भी अपने मा-बाप का अकेला लड़का हूँ। न मैं ही अपना कुल छोड़ सकता हूँ, और न सूया ही छोड़ सकती है।*"

---

* जापान में यदि लड़की ही उत्तराधिकारिणी होती है, तो उसका विवाह अपने ही परिवार में किसी से कर देते हैं। कुल के

इस पर सूया ने रोते हुए कहा था—"मैं अपने हाथ से गला काटकर मर जाऊँगी, यदि तुमसे मुझे अलग किया जायगा। चाहे जो कुछ हो, मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकती।"

रोते-रोते सूया की हिचकियाँ बँध गईं, और वह शिनसुकी के कंधों के सहारे मुश्किल से खड़ी रह सकी थी।

सीजी ने आशा बँधाते हुए कहा—"शांत हो मेरी रानी, शांत हो। मुझे एक उपाय सूझ पड़ा है। तुम दोनों भागकर मेरे यहाँ चले आओ, फिर मैं किसी-न-किसी युक्ति से तुम लोगों का विवाह करवा दूँगा। दोनों तरफ़ के बुड्ढों से मिलकर, उन्हें उलटा-सीधा समझाकर, राह पर ले आऊँगा। तुम मुझ पर विश्वास करो, और फिर तुम लोगों को मिला देना मेरा काम है।"

उसी दिन से सूया के सिर पर भाग चलने का भूत सवार हो गया। सीजी के जाने के बाद ही सूया ने शिनसुकी के सामने भाग चलने का प्रस्ताव रक्खा। सीजी की बातें इतनी लच्छेदार थीं कि सूया को विश्वास हो गया कि इसी उपाय से वे विवाह-सूत्र में बँध सकते हैं, उनके अबाध मिलन का दूसरा उपाय नहीं है। उस दिन से अभी तक शिनसुकी अपना कर्तव्य स्थिर नहीं कर सका था। वह ऐसी दुविधा में पड़ा था, जिससे छुटकारा पाना बड़ा कठिन था। उसके सामने एक ओर सूया

बाहर विवाह करने से पारिवारिक संपत्ति दूसरे परिवार में चली जायगी, जिसे जापानी सबसे ख़राब बात समझते हैं।

थी, दूसरी ओर उसके माता-पिता। एक ओर का भविष्य अंधकारमय था, न-जाने उस पर क्या बीते, दूसरी ओर उसकी उन्नति और सुखद जाना हुआ भविष्य था। एक ओर उसका और उसकी आत्मा का पतन था, दूसरी ओर उसकी ख्याति और उत्कर्ष। वह अभी तक निश्चय न कर सका था कि वह किस पथ पर जाय! पतन की ओर या उत्थान को ओर?

सूया ने आज फिर उसे हिचकिचाते देखकर कहा—"क्यों, क्या तुम्हारी वे प्रतिज्ञाएँ हवा हो गईं? क्या तुम्हारे सब हौसलों पर पानी फिर गया? क्या अपनी बात से पीछे हटना चाहते हो? बोलो?"

कहते-कहते सूया ने शिनसुकी की कलाई पकड़ ली, जो अभी तक सिर झुकाए हुए चिंता में निमग्न था। जैसे लता वृक्ष के चारो ओर लिपट जाती है, यदि वृक्षों में चलने की शक्ति हो, तो वह चलने न दे, उसी तरह सूया भी शिनसुकी के शरीर से लिपट गई।

सूया ने उसे झकझोरते हुए कहा—"समझ लो, यदि तुम मेरे साथ न चलोगे, तो मैं अभी तुम्हारे सामने छुरी मारकर मर जाऊँगी।"

शिनसुकी हार गया। उसकी कामना और लालसा की ही विजय हुई। उसने अपने को भाग्य के सहारे छोड़ दिया। जीवन की सब इच्छाएँ वह छोड़ सकता है, किंतु सूया को नहीं। तब फिर सूया के कथनानुसार ही क्यों न करें।

शिनसुको ने काँपते हुए कंठ से कहा—"अच्छा सूचान, चलो मैं चलता हूँ। आगे राम मालिक है, जो होना होगा, वह तो होगा ही।"

यह कहकर शिनसुको सूया को वहीं पर छोड़ दूकान के भीतर चला गया, और एक बाँस के संदूक से एक सूती वस्त्र निकालकर पहन लिया, और अपने कपड़े उतारकर वहीं रख दिए। उसकी आत्मा ने उसे उसके स्वामी के कपड़े पहन जाने के लिये गवाही न दी। खूँटी पर से सूया की मोमजामी बरसाती लेकर फिर वहीं आया, जहाँ बरामदे में वह उसकी प्रतीक्षा कर रही थी।

सूया इस समय बड़े ही मनमोहन वेश में थी। उसका सिर खुला हुआ था, शरीर पर लहँगे की तरह सुनहले काम का काला वस्त्र था, और केवल साटन का कुरता पहने हुए थी।

शिनसुको ने मन-ही-मन कहा—"भला ऐसी सरदी में सूया कैसे जायगी।"

सूया इस समय बिल्कुल गीशा मालूम होती थी, जिसके प्रति उसकी असाधारण घृणा थी। उसके पैर नंगे थे, क्योंकि गीशा सदैव नंगे-पैर रहती है।*

* पहले गीशा जूते वग़ैरा न पहनने पाती थीं, विशेषकर उस समय, जब वे अपने प्रेमियों के पास होती थीं। नंगे-पैर रहना अधीनता-सूचक था, किंतु बाद में जिसके पैर सुंदर होते थे, वे सदा नंगे-पैर रहती थीं। जापान और चीन में छोटे पैर होना सौंदर्य का एक मुख्य अंग माना गया है।

बरामदे का एक दरवाज़ा बाग़ में खुलता था। उसी को खोलते हुए शिनसुकी ने कहा—"अच्छा आओ, चलें। इसी रास्ते से चलना निरापद् रहेगा।"

बाहर हवा बंद हो गई थी, लेकिन शायद बर्फ़ अब भी गिर रही थी। बाग़ और बरामदे में कई इंच मोटी बर्फ़ जम गई थी। उसने बड़ी सतर्कता से सूया का हाथ पकड़कर नीचे उतारा, और पकड़े हुए बाग़ के फाटक तक ले गया। उसे लाँघकर वे किसी तरह सड़क पर आ गए।

आकाश मेघाच्छन्न था, और हिम-वर्षा बंद हो गई थी। बाहर जितनी सरदी का डर था, उतनी न थी। एक ही छाते के नीचे दोनो जा रहे थे। सूया छाते की डंडी पकड़े हुए थी, और शिनसुकी अपने हाथ से उसका हाथ दबाए हुए था, जिसमें उसकी उँगलियाँ ऐंठने न लगें। ताचीबानाचो होते हुए वे हामाचो की ओर चले।

शिनसुकी के कोमल सुंदर शरीर को देखकर किसी को यह विश्वास न होता था कि उसमें शक्ति भी है, किंतु वास्तव में वह जितना सुंदर था, उतना ही बलवान् भी। उसके हृदय में तुमुल युद्ध मचा हुआ था। कभी-कभी मनोवेग से वह सूया का हाथ दबा देता, और इतने जोर से दबाता कि उसका हाथ टूटने लगता। सूया चीख उठती और पूछती—"क्यों शिनडान, क्या मामला है।"

फिर ममत्व-पूर्ण स्वर में पूछती—"क्या तुम्हारी हिम्मत

तुम्हारा साथ छोड़ रही है।" कहते-कहते उस निबिड़ अंधकार को भेदकर वह शिनसुकी की मुखाकृति देखने का यत्न करती। सूया की आँखों से तो साहस का समुद्र उमड़ा पड़ रहा था, क्योंकि बरसों की कामना आज फली थी।

जब वे नया पुल पार कर रहे थे, उसी समय आधी रात का घंटा बजा, मानो उसने उस बहती हुई नदी को बर्फ़ हो जाने के लिये सचेत किया हो।

सूया ने उस भयंकर नीरवता को भंग करते हुए कहा—"यह घंटा सुना, ठीक वैसे ही बोलता है, जैसे नाटक में पर्दा उठने के पहले घंटा-ध्वनि होती है।"

शिनसुकी ने शुष्क स्वर में कहा—"देखता हूँ, तुम्हारे तंतुओं में मेरी अपेक्षा अधिक साहस है!"

इसके बाद दोनो चुप हो गए, और चुपचाप "ओनागी-गावा" नदी के किनारे सीजी के घर के पास आ गए।

द्वितीय खंड

सीजी ने उनकी अभ्यर्थना करते हुए कहा—"इस काम में बहुत देर लगेगी। घबराने और जल्दी करने से काम बिगड़ जायगा। दस-बारह दिन तक तो तुम्हें बिल्कुल चुपचाप रहना चाहिए, इसके बाद मैं जाकर उनसे बातें करूँगा। इस बीच में तुम लोग क़तई बाहर न निकलना, जहाँ तक हो सके अपने को छिपाए हुए यहाँ रहो। मेरे घर के ऊपरी कमरे में तुम दोनो रह सकते हो। मैं अभी सब साफ़ करवाए देता हूँ। मैं हृदय से तुम दोनो की मंगल-कामना करता हूँ।"

इसके बाद सीजी उन्हें अपने घर के भीतर ले गया और अपनी स्त्री से परिचय करवा दिया, और सेवा-सुश्रूषा के लिये अपने नौकरों को आदेश दिया।

सीजी के यहाँ रहते हुए युगल-दंपति को एक मास से अधिक हो गया, पर अभी तक घर का कुछ भी हाल न मिला। सीजी कान में तेल डाले बैठा था—मानो उसे कोई परवा नहीं है। उसकी मित्रता उनकी सब आज्ञाओं को यथा-वत् पालन करने से ही जान पड़ती थी। जब कभी सूया का मन घबराता, तो वह शिनसुकी से कहती—"सीजी सान *

* "सान" आदर-सूचक शब्द है, जो नाम के बाद लगा दिया जाता है, जैसे महाशय।

कारबारी आदमी है, उसे ज़रा भी फ़ुर्सत नहीं मिलती। मुझे तो उधर के रंग-ढंग अच्छे नहीं जान पड़ते। जैसी उसे आशा थी, वैसे आसार उसे नहीं दिखाई पड़ते, इसीलिये चुप है। जहाँ अवसर आया, वह सब बातें ठीक कर देगा। उसे विश्वास है कि वे लोग कभी-न-कभी ज़रूर राज़ी होंगे, इसीलिये हम लोगों को साफ़-साफ़ उत्तर देकर निराश नहीं करना चाहता।"

शिनसुकी के हृदय में सोजी के प्रति अविश्वास उत्पन्न हो चला था, किंतु सूया का अब भी विश्वास था।

जब कभी शिनसुकी को सूया चिंता में डूबा हुआ देखती, तो कहती—"अब व्यर्थ क्यों सोच-सोचकर अपने को कुढ़ा रहे हो। जब घर छोड़ दिया है, तो वहाँ अगर फिर न जा सके, तो इसमें दुःख की क्या बात है। यदि वे लोग हमें नहीं बुलाना चाहते, तो न बुलावें। तुम नाहक़ सोच-सोचकर प्राण दिए देते हो। हम दोनो अकेले ही रहेंगे, लेकिन साथ तो रहेंगे। कौन जानता है, इस तरह रहने में ही हमें अधिक सुख मिले। कम-से-कम, आजकल मैं जितनी सुखी हूँ, उतनी सुखी मैं कभी न थी। सच कहती हूँ, अगर घरवाले न भी बुलावें, तो मुझे ज़रा भी दुःख न होगा।"

इस नए घर में आने के बाद से सूया की जीवन-प्रगति में बहुत कुछ अंतर आ गया था। अंग-अंग से प्रसन्नता उमड़ी पड़ती थी। हर्ष से फिरकी की भाँति नाचती फिरती थी। साहस और आशा, दोनो उसमें नव-जीवन भर रहे थे। सूया

के कमरे की एक खिड़की नीचे बहती हुई नदी की ओर। खुलती थी। यहाँ से वह रोज़ गीशा-बालिकाओं का जल-विहार निरखा करती थी—उनके प्रेमालाप, और उनकी प्रेम-लीलाएँ देखा करती। गीशा-बालिकाओं को देखकर न-जाने क्यों उसके हृदय में गुदगुदी होने लगती। उनसे बातचीत करने के लिये, उनकी प्रेम-लीलाओं में योग देने के लिये, उसका जी ललचा उठता। धीरे-धीरे, उनकी चाल-ढाल, उनके रहन-सहन और वेश-भूषा का सूया पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वह उन्हीं की तरह कपड़े पहनने लगी, उन्हीं की तरह बोलने का अभ्यास करने लगी। अभी तक वह कुमारी बालिकाओं की भाँति वेणी बाँधती थी, लेकिन अब उन्हीं की तरह बाल बाँधने लगी। सीजी की स्त्री भी इस काम में उसकी सहायता करती। उसने उसके लिये उन्हीं की तरह कपड़े भी ला दिए। लेकिन जब वह उन्हीं की भाषा में बात भी करने लगी, तो शिनसुकी को असह्य हो उठा।

उसने एक दिन अपनी भ्रू कुंचित करके कहा—"तुम कौन भाषा में आजकल बोलती हो। उन दुश्चरित्राओं की भाषा, उनके शब्द, उनकी चाल-ढाल-सी उतारते हुए तुम्हें लज्जा नहीं लगती। तुम्हारा आत्म-सम्मान क्या हुआ, क्या घर के छोड़ने के समय उसे भी वहाँ छोड़ आई हो। जब मैं उनके संबंध में बात तक करता हूँ, तो मुझसे बोला नहीं जाता।"

किंतु शिनसुकी की बातों का सूया पर कुछ भी असर न

पड़ा। वह पिंजड़े से छूटे हुए पक्षी की तरह आनंद में फुदकी-फुदकी फिरती थी। सुबह से शाम तक हँसना, केवल हँसना, उसका काम था। अपने नए जीवन की प्रसन्नता से वह इतनी प्रसन्न थी कि पुरानी मा-बाप के प्यार की स्मृति भी जाती रही। परतंत्रता का बाँध टूट गया था, और सूथा अपने को विलास-सागर में निराधार छोड़कर, उसकी लोल तरंगों में डूब-उतरा रही थी। उसका हाथ खुला हुआ था। पैसे का मोह तनिक भी न था। दोनों हाथों से पैसा लुटा रही थी। हर तीसरे दिन वह सोजी को सपरिवार आमंत्रित करती, हर संध्या को बोतलों के बाद बोतलें खुलतीं। मदिरा का एक प्याला उसे आवेश में ला देने के लिये काफ़ी था, किंतु उतने से उसकी तृप्ति न होती थी, वह धीरे-धीरे अपनी मात्रा बढ़ा रही थी, इतनी कि जितनी उसके मित्र पी सकते हैं। यहीं तक बस न था, वह उनसे एक पग आगे बढ़कर अपना कौशल और अपना साहस दिखाने को उत्सुक थी। जिस किसी रात को वह परिमाण से अधिक पी जाती, उस रात को शिनसुकी फिर न सो सकता था—सोना उसके लिये दुर्लभ हो जाता। कलह और क्रोध का साक्षात् रूप होकर घर अपने सिर पर उठा लेती थी। धीरे-धीरे उन दोनों का भाग्य, उन्हें पाप और वासना के उस गहरे गड्ढे की ओर खींचे लिए जा रहा था, जहाँ से लौटना दुरूह ही नहीं, वरन् असंभव था, और जो मुँह बाए हुए दोनों को निगल जाने के लिये तैयार था।

इस तरह समय बीतता गया। पौष मास के हाचीमान का मेला भी ख़त्म हो गया, लेकिन फिर भी घरवालों ने कुछ ख़बर नहीं ली।

जब कभी सूया या शिनसुकी सीजी से इस संबंध में बात छेड़ते, तो वह तुरंत ही उत्तर देता—"अभी-अभी तो मैं उन लोगों से बात करके आया हूँ, लेकिन अभी वे बिगड़े हुए हैं; किसी तरह नहीं मानते। अभी चार-पाँच दिन और ठहरो। ज़रा धीरज धरे रहो, सब ठीक हो जायगा।"

सीजी की बातें उनके उमड़ते हुए दिलों को ढाढ़स बँधातीं। वे फिर उस विषय को न छेड़ते, इसलिये कि सीजी कहीं नाराज़ न हो जाय।

एक दिन शिनसुकी ने कहा—"सीजी सान, मैं अपने अपराधों का प्रायश्चित्त करने के लिये तैयार हूँ। जो कुछ वे दंड दें, सिर झुकाकर ग्रहण करूँगा। मैं हज़ार तरह से माफ़ी माँगने के लिये तैयार हूँ। लेकिन अगर वे किसी तरह मेरे अपराध क्षमा न करेंगे, तो हम लोग भी सब कष्ट सहने के लिये तैयार हैं। यदि वे लोग हमें बुलाकर अपने पास नहीं रखना चाहते, तो हम लोग भी बाध्य होकर अलग ही रहेंगे। हम बुरा-से-बुरा समाचार सुनने के लिये तैयार हैं। तुम विश्वास करो, हम लोग किसी तरह भी किसी क़िस्म की ख़बर से कातर न होंगे। दया करके सब ठीक-ठीक बातें हमें बताओ कि इस समय स्थिति कैसी है। अब सब बातें जानना आवश्यक हो गया है।

इसके अतिरिक्त हम लोग कैसे तुम्हारी कृपा पर निर्भर रहकर तुम्हारे घर में रह सकते हैं।"

सोजी ने दया-भाव दरशाते हुए कहा—"तुम किसी तरह घबराओ नहीं, सब ठीक हो जायगा। अगर मैं देखता कि मुझे सफलता नहीं मिलेगी, तो न-मालूम कब को मैं अलग हो गया होता, और साफ़-साफ़ जवाब दे देता। मैं उन लोगों के पास छः-सात बार जा चुका हूँ, और सब ओर की बातें समझा-बुझाकर उन्हें क़रीब-क़रीब राह पर ले आया हूँ। मैं उनसे कहता हूँ, यदि दो नवयुवक और नवयुवती कहीं भाग जाते हैं, तो इसका मतलब यही है कि उनके मा-बाप उनका विवाह कर दें। यदि वे विवाह नहीं करते, तो वे दोनो यही समझते हैं कि उनके मा-बाप की इच्छा नहीं है कि वे सुखी हों। कभी-कभी यह भी कहता हूँ कि अभी तुम लोगों का क्रोध बहुत ज्यादा है, इसीलिये मेरी बातों पर आप ध्यान नहीं देते। मैं उनको अपनी संरक्षता में रक्खे हुए हूँ। जब आपका क्रोध शांत हो, बुलवा दीजिएगा। देखा? इसमें घबराने की कौन बात है। थोड़े दिनों में जब दोनो बूढ़ों का क्रोध शांत होगा, वे तुम लोगों को बुलवा लेंगे।"

यह तो नहीं कहा जा सकता कि वे सोजी की बात पर विश्वास करते थे या नहीं, लेकिन इतना अवश्य था कि उनकी चिंता कुछ कम अवश्य हो जाती थी।

युगल-दंपति को दृढ़ विश्वास था कि वर्ष के समाप्त होते-

होते वे बुला लिए जायँगे, और नव-वर्ष के साथ ही उनका नव-जीवन शुरू होगा।

इस तरह मुक्त-हस्त रहने के लिये अटूट संपत्ति की आवश्यकता थी। सूया के दस रिमो, एक-एक करके समाप्त होने लगे। अब केवल पाँच ही रिमो बचे थे और सिर पर वर्ष का अंतिम त्योहार आ रहा था। सूया रात-दिन इसी सोच में डूबी रहती कि कैसे सम्मान-पूर्वक वह त्योहार बीतेगा। उसने अपनी चाँदी की बाल-सुई एक दासी के हाथ बेचवाकर कुछ और धन बटोरा। लेकिन शिनसुकी को इन बातों की कुछ भी ख़बर न थी। ऐसे काम उससे छिपाकर किए जाते थे।

त्योहार आ गया। रुपए की कमी थी, लेकिन तिस पर भी सूया ने तीन सिक्के सीजी को देकर अपने नाम से ग़रीबों में बँटवा देने के लिये कहा।

इस घटना के तीन दिन पश्चात् एक दिन सूया और शिनसुकी, दोनो बैठे हुए बातें कर रहे थे कि सीजी के एक नौकर ने आकर शिनसुकी से कहा—"तुम्हारे लिये एक सुसमाचार है। अभी-अभी मुझे यह मालूम हुआ है कि मेरा मालिक और तुम्हारे पिता, दोनो कावाचो चाय-घर में बैठे हुए बातें कर रहे हैं। सब बातें ठीक हो रही हैं और आशा है कि आज ही सब तय हो जायगा। इसलिये तुम्हारा जाना वहाँ आवश्यक है, और तुम्हें अकेले बुला भेजा है। अकेले इसलिये बुलाया है, जिसमें तुम दोनो खुले दिल से बातें कर सको।"

फिर सूया से कहा—"आप मुझे क्षमा करेंगी, और इनको अकेले जाने के लिये अनुमति दे देंगी। अगर आज ही सब तय हो गया, तो फिर विलग होने की कभी भी नौबत न आवेगी।"

लेकिन न-जाने क्यों सूया का माथा ठनका। उसे इस नौकर की बात पर विश्वास न हुआ। बात हर्षप्रद और आशा-जनक तो थी, लेकिन न-मालूम क्यों सूया का मन प्रसन्न नहीं हुआ। कौन जानता है कि यही वियोग फिर वियोग हो जाय, वे लोग उसे पकड़कर ले जायँ, और फिर न आने दें। वह सभीत शिनसुकी की ओर देखने लगी।

शिनसुकी की भी दशा सूया से अधिक अच्छी न थी। वह चिरकाल से ऐसे ही अवसर की प्रतीक्षा कर रहा था, लेकिन जब वह सामने आया, तो न-मालूम क्यों उसका दिल बैठने लगा। विविध शंकाओं ने, उन्हें चारो ओर से, घेरकर दुखी करना आरंभ कर दिया। शिनसुकी का मन अपने पिता के सामने आने को न होता था, क्योंकि अभी तक विश्वासघात का पाप-पंक उसके सिर पर लगा हुआ था—अभी तक उसके स्वामी ने उसे क्षमा नहीं किया था, और न उसने अभी तक क्षमा माँगी ही थी।

उन दोनों को असमंजस में देखकर नौकर ने कहा—"देर न करिए, जल्दी चलना चाहिए।"

नौकर का नाम था सांता। सांता जल्दी करने लगा।

शिनसुकी को अधिक सोचने-विचारने का समय न मिला। वह जल्दी से तैयार होकर सांता के साथ नीचे आया।

लेकिन सूया भी कमरे में ठहर न सकी, और वह भी उनके पीछे-पीछे चली।

शिनसुकी जब नाव पर चढ़ रहा था, सूया ने सांता की बाँह पकड़कर कहा—"सांता सान, क्षमा करो, न-मालूम क्यों मेरा जी घबराता है। मैं भी साथ चलूँगी। दया करके मुझे भी अपने साथ ले लो। मैं कोई ऐसी बात न करूँगी, जिससे तुम्हारे काम में बाधा पड़े, या तुम पर किसी तरह की आँच आवे।"

लेकिन सांता ने हाथ छुड़ाकर नाव खोलते हुए कहा—"आह! इसी बात को तो मैं डरता था! तुम्हारा लड़कपन अभी तक नहीं गया। तुम तो ऐसा डर रही हो, मानो इन्हें कोई खा जायगा। मेरे मालिक पर निर्भर रहो, सब ठीक हो जायगा। तुम्हारे जाने से सब बना-बनाया खेल चौपट हो जायगा, और जिस तरह पहिए में लकड़ी पड़ जाने से गाड़ी फिर नहीं चलती, वैसे ही कोई बात न होने पावेगी। सोच लो, इसमें तुम्हारा ही लाभ है।"

सूया ने कातर स्वर में कहा—"अगर ऐसा ही हो, तो मैं अलग एक कमरे में बैठी रहूँगी, लेकिन मुझे भी ले चलो। मैं नहीं जानती कि क्यों मेरा मन इन्हें अकेले छोड़ने का नहीं होता।"

फिर एक रिमो उसके हाथों में रखते हुए कहा—"सांता

सान, मैं रोज ऐसी प्रार्थना नहीं करती, आज तुमको मेरी बात मानना ही होगी।"

सांता रिमो लेकर कुछ देर तक सोचता रहा, फिर सूया को लौटाते हुए कहा—"अभी उस दिन तुमने मुझे बखशीश दी थी, रोज-रोज मैं नहीं पसंद करता। उस दिन मेरे स्वामी ने मुझे डाटा था। नहीं-नहीं, मैं नहीं ले सकता।"

सांता ने सूया का रिमो लौटा दिया। सूया सांता पर विशेष रूप से कृपालु रहती थी, क्योंकि वह सीजी का सबसे प्यारा नौकर था। सदैव कुछ-न-कुछ बखशीश, इनाम वग़ैरह दिया करती थी। वह भी सूया की सभी आज्ञाएँ पालन करने को तत्पर रहता। किंतु आज की यह रुखाई सूया को अधिक आशंकित करने के लिये काफ़ी थी।

शिनसुकी ने सूया को धैर्य बँधाते हुए कहा—"सू-चान, तुम मेरे लिये इतनी चिंता न करो। सीजी सान की शायद यही इच्छा है कि मैं अकेला जाऊँ। शायद वह इसी में हमारी भलाई समझता है। इसमें तो कोई संदेह ही नहीं है कि वह हमारा हितेच्छुक है। हमें उसकी आज्ञा मानना चाहिए।"

इन शब्दों से सूया को न सांत्वना ही मिली और न उसकी उद्विग्नता ही दूर हुई। डूबते हुए पीले सूर्य की पीली आभा ने उसके पीले मुख को अपने पीलेपन में छिपा लिया। जैसे ही शिनसुकी ने अपना दूसरा पैर भी नाव पर रक्खा—एक भय का तड़ित्-प्रवाह उसके शरीर में दौड़ गया—उसके हाथ-पैर ढीले पड़ गए।

सूया ने उसका हाथ पकड़ते हुए कहा—"अच्छा, प्रतिज्ञा करो कि तुम तुरंत हो, जैसे ही काम खत्म हो जायगा, यहाँ आकर पहले मुझसे मिल जाओगे। तुम्हें पहले यहाँ आना पड़ेगा, फिर बाद में कुछ दूसरा काम करना।"

शिनसुको ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर सप्रेम दबाते हुए कहा—"तुम मुझ पर विश्वास रक्खो, मेरा पहला काम यहाँ आना होगा। डरने की कोई बात नहीं है।"

शिनसुको का कंठ-स्वर उसे स्वयं भंग-सा जान पड़ा। उसे स्वयं अपनी बात पर विश्वास न था। शिनसुको न-मालूम कब से इसी अवसर को पाने के लिये लालायित था। उसे विश्वास था कि जब कभी ऐसा सुदिन आवेगा, तो वह धन्य हो जायगा। किंतु इस समय उसका मन डूबा जा रहा था। उसके हृदय में आया कि वह कहीं न जाय, सूया को लेकर फिर दूर, अति दूर, जहाँ कोई भी न जा सके, भाग जाय।

सांता ने नाव खोल दी थी। वह लाल तरंगों पर संतरण करती हुई चल दी।

दक्षिणी वायु बह रही थी। आज और दिनों की अपेक्षा सरदी कम थी। समय सुहावना और मनोरम था। आज सुबह ही से सूया का सिर दर्द कर रहा था। इस घटना से उसका सिर-दर्द तो जरूर कम हो गया, किंतु मन निस्तेज हो गया और किसी भावी आशंका से वह निर्जीव-सी हो गई। उसके हाथ-पैर अवश थे, तब भी वह खिड़की के पास खड़ी होकर

दूर अंधकार में, रात्रि के गर्भ में छिपती हुई अपने प्रियतम की नौका देख रही थी। कृष्णपक्ष था, चाँद निकलने में अभी देर थी। दूर आकाश में काले-काले बादलों का झुंड उमड़-उमड़कर तेजी से समीर-वाहन पर सवार था और क्षण-क्षण में सामने के नीचे आकाश का मुँह काला करता हुआ तेजी से चला आ रहा था। सांता की नाव उसी निविड़ अंधकार में धीरे-धीरे छिपती जा रही थी।

जब नाव नहर पारकर बीच नदी में पहुँची, तो शिनसुकी ने अपने चारो ओर अंधकार-ही-अंधकार देखा। उसका मन न-जाने क्यों भयभीत होकर शिथिलता से अनेक तर्क-कुतर्कों में डूब गया। उसने धीरे से कहा—"इतना अंधकार! उफ़! न-जाने क्या होनेवाला है।"

सांता ने शिनसुकी की बात सुन ली। वह भी बातें करना चाहता था।

उसने कहा—"अगर पूछो तो, मेरी यही इच्छा है कि नव-वर्ष के त्योहार तक कोई ऐसी दुर्घटना या आँधी-पानी न आवे, जो सब रंग भंग कर दे, किसी तरह सकुशल त्योहार बीत जाय, फिर चाहे जो कुछ हो। पर आज के रंग-ढंग से तो ऐसा मालूम होता है कि आज रात को बड़ी भयानक वर्षा होगी। हवा कितनी तेज़ है, बादल उमड़े आ रहे हैं। न-मालूम किस समय बरस दे।"

फिर थोड़ी देर बाद कहा—"मैं तुम्हारी सुंदरी स्त्री के लिये

बहुत चिंतित हूँ। इस समय अब मदिरा-पान में व्यस्त होगी।"

यनागोबाशी का कावचो चाय-घर उन दिनों फ़ेशनेबुल आदमियों का अड्डा हो रहा था। शहर-भर के बड़े-बड़े आदमी वहाँ आकर चाय-पान करते और गीशा का गान सुनते। वहीं से उनके साथ जल-विहार आदि करने जाते। शिनसुकी दो-तीन बार अपने सेठ के साथ यहाँ आ चुका था। सांता की गति-विधि से साफ़ जान पड़ता था कि वह वहाँ से भली प्रकार परिचित है। जब वह चाय-घर के अंदर जा रहा था, उसने भीतर बैठी हुई दो-तीन गीशा से हँसकर कहा—"देखो, मैं तुम्हारे उपयोग के लिये एक सुंदर नवयुवक लाया हूँ, ऐसा जैसा कि तुम नाटकों में देखती हो और उनकी रूप-माधुरी पान करने के लिये उतावली हो उठती हो।"

शिनसुकी सांता की बात सुनकर चौंका और सिर झुकाए चुपचाप उसके पीछे-पीछे चलकर वहाँ आया, जहाँ सीजी बैठा हुआ मदिरा-पान कर रहा था। उसकी आँखें लाल होकर झूम रही थीं।

सीजी ने शिनसुकी को देखते ही कहा—"आख़िर चूक गए। अभी तक तुम्हारे पिता बैठे हुए तुम्हारी राह देख रहे थे, और अभी-अभी गए हैं। शिनडान, मैं तुम्हारे लिये बड़ा दुखी हूँ, तुमने अपने आने में क्यों इतनी देरी की?"

यह कहकर सीजी ने एक ठंडी साँस ली, और उसके मुख

से विषाद टपकने लगा। लेकिन जब सांता ने सूग्रा की निर्मूल आशंकाओं का वर्णन किया, सीजी उत्फुल्ल होकर हँसने लगा—उसकी हास्य-कांति फिर वापस आ गई।

शिनसुकी भी अपने पिता से न मिलकर एक तरह से प्रसन्न ही हुआ। अभी तक उसके कलेजे पर एक बड़ा-सा पत्थर रक्खा हुआ था—न-जाने उस पर क्या बीते और उसे क्या सुनने को मिले, उसके पिता उसके साथ कैसा व्यवहार करें, किंतु अपने पिता को वहाँ न देख उसने अघाकर एक गहरी साँस ली।

सीजी ने एक प्याला भरकर शिनसुकी को देते हुए कहा—"लो, तुम भी थोड़ा सा पियो, पीकर थकावट दूर करो।"

शिनसुकी इनकार न कर सका, बैठ गया। सीजी ने जो कुछ उसके पिता से बातें हुई थीं, कहना शुरू किया। बोला—"आज मैं कुछ यात्री लेकर 'दायोनजीभी' चाय-घर गया था। वहाँ से तुम्हारे पिता का घर बहुत समीप है। मैंने इस अवसर को हाथ से जाने देना उचित न समझा, और तुम्हारे पिता से मिलकर, तुम्हारे संबंध में बातें करना शुरू किया। पहले तो वे माने ही नहीं, किसी तरह भी मेरी बात न सुनते थे। वे कहते थे कि मैं उसको कभी क्षमा नहीं कर सकता, जो अपने स्वामी के साथ ऐसा विश्वासघात कर सकता है। इस पर मैंने कहा कि 'अगर दंपति इस तरह त्याज्य होकर अलग रहेंगे, तो सुरुगाया-परिवार के साथ

और अधिक अन्याय होगा, जिसे आप शायद पसंद नहीं करेंगे। इसके अतिरिक्त अगर उन्होंने निराश होकर आत्म-हत्या कर ली, तो फिर दोनो वंश-प्रदीप बुझ जायँगे और वंश-वृद्धि की सब आशाएँ धूल में मिल जायँगी। इस तरह, कम-से-कम, एक परिवार को तो वंश-वृद्धि होगी।' मेरी इस बात से तुम्हारे पिता फिर सोचने लगे, और धीरे-धीरे उनका क्रोध भी कम हुआ। थोड़ी देर बाद उन्होंने कहा—'अगर सुरु-गायावाले उन्हें क्षमा करके अपनाने के लिये तैयार हैं, तो वह उसे क्षमा करके उनके वंश में विवाह कर देने की अनुमति दे देगा।' उन्होंने यह भी कहा कि 'सच तो यह है कि यह सब वह मेरी वजह से कर रहे हैं, क्योंकि बीच में मैं पड़ा हूँ, नहीं तो वह दुष्ट संसार के चाहे जिस कोने में जाकर छिपता, मैं उसे जरूर दंड देता।' इतना कहने के बाद शोक और क्रोध से उनकी दशा बुरी हो गई, वे काँपने लगे, परंतु मैंने उन्हें हर तरह से समझा-बुझाकर शांत किया। मैंने कहा कि 'जो कुछ अपराध आपके पुत्र से हुआ हो, मैं उसकी ओर से क्षमा माँगता हूँ, आप क्षमा करें। अब सब आपकी क्षमा पर निर्भर है, क्योंकि मैंने सुरुगायावालों को तो समझाकर ठीक कर लिया है, केवल आपकी अनुमति की देर है।' मैं उन्हें फिर अपने साथ यहाँ लिवा लाया, और तुम्हें बुलाने के लिये सांता को भेजा, क्योंकि मेरी इच्छा थी कि पिता-पुत्र में भेंट हो जाय और वे तुम्हें क्षमा कर दें। पहले तो

तुमसे मिलने के लिये किसी तरह राजी ही न होते थे, फिर बहुत कहने-सुनने से राजी हुए। लेकिन तुमने ही देर में आकर सब खेल बिगाड़ दिया। वे अधिक देर तक न ठहर सके। एक तो कामकाजी आदमी, दूसरे नव-वर्ष का त्योहार सिर पर है, कैसे वे इतनी देर ठहर सकते हैं। तुम्हारे आने से शायद दो ही तीन मिनट पहले गए होंगे। शिनसुको सान, देखा। पिता का हृदय ऐसा होता है।"

सीजी के अंतिम शब्दों ने शिनसुको के हृदय में आग लगा दी। उसके नेत्रों के सामने उसके समस्त अपराधों का चित्र खिंच गया। वह कितना नीच और अपराधी है, और वह वृद्ध-हृदय कितना ऊँचा और क्षमावान् है। उसका सिर नत हो गया। उसके पैर काँपने लगे, और आँखों से अश्रु-धारा उमड़ चली।

सीजी ने अचानक होश में आए हुए व्यक्ति की तरह कहा—"अरे, मैं तो बिल्कुल भूल गया था। आओ, आज इस ख़ुशी में हम लोग कुछ मदिरा-पान तो करें, क्योंकि एक तरह से तुम्हारा काम तो हो ही गया है। जब ऐसे अवसरों पर भी हम लोग शराब से गला न सींचेंगे, तो फिर कब पिएँगे? क्या ही अच्छा होता यदि एक-आध गीशा भी होती, लेकिन नहीं...... तुम एक अतीव सुंदर व्यक्ति हो, मैं तुम्हारे पथ में रोड़े न अटकाऊँगा।"

सीजी जी खोलकर शराब पीने लगा, और शिनसुकी भी

सहर्ष योग देने लगा। आकाश मेघाच्छन्न हो गया था, हवा बंद हो गई थी, और बड़ी-बड़ी बूँदें गिरने लगी थीं। थोड़ी ही देर में मूसलाधार पानी बरसने लगा। पानी इतने जोरों से बरस रहा था, मानो संसार आज ही जलमय हो जायगा। बातचीत का शब्द तक न सुनाई देता था। सीजी, सांता और शिनसुकी तीनों आनंद से मदिरा देवी की उपासना में तल्लीन थे।

दो-तीन घंटे तक बराबर पानी बरसता रहा। बंद होने के कोई लक्षण अब भी नहीं दिखलाई देते थे।

सीजी ने उठते हुए कहा—"दस बजनेवाला है, मुझे एक आवश्यक काम से कूबी जाना है। पानी इतनी जोरों से बरस रहा है, लेकिन तब भी जाना ही होगा।"

फिर एक चाय-घर के नौकर को बुलाकर कहा—"शिनडान, भाई माफ़ करना, बहुत थोड़ा समय बचा है, देर हो जाने से मुझे पालकी पर जाना होगा। लेकिन तुम्हें तो कोई जल्दी है नहीं। सांता के साथ बैठकर खूब जी भरकर शराब पियो। मैं तो अब जाता हूँ।"

यह कहकर शिनसुकी से बिदा ले सीजी चला गया।

सीजी के चले जाने के एक घंटे बाद तक वे दोनों बैठे हुए पानी बंद होने की राह देखते रहे, किंतु पानी बंद न हुआ।

शिनसुकी ने कहा—"फ़िज़ूल यहाँ बैठे रहना है, पानी बंद नहीं होने का।" वह सूया के लिये चिंतित था। जाने के लिये उठा।

सांता ने उसे उठते देखकर कहा—"अगर अभी चलना है, तो पालकी पर सवार होकर चलो।"

लेकिन शिनसुकी राजी न हुआ।

सांता ने कहा—"अच्छा, मैं नाव पर चलूँगा और तुम पैदल नदी के किनारे-किनारे मेरे साथ चलना। शायद रास्ता उतना खराब न हो, जितना हम सोचते हैं। ताकावाशी से छाते माँग लेंगे और फिर नदी-तट से घर चलेंगे।"

हवा का वेग धीरे-धीरे कम हो रहा था। सांता चाय-घर से एक लालटेन लेकर आगे-आगे चल दिया। शिनसुकी एक छोटे-से कागज के डब्बे में नूया के लिये थोड़ी-सी मिठाई लेकर सांता का अनुसरण करने लगा। नदी-तट पर पहुँचकर सांता लालटेन लिए हुए नाव पर सवार हो गया और शिनसुकी किनारे-किनारे जाने लगा। सूची-भेद्य अंधकार एक लालटेन के क्षीण प्रकाश से दूर न हो सकता था। किसी तरह अपना-अपना मार्ग टटोलते हुए चले जाते थे।

बोरियोगोकू होटल के पास पहुँच, वहाँ से दाहनी ओर चले। सामने ही होसोकावा के जिमींदार की अट्टालिका थी। यहाँ पहुँचते ही सांता के मुँह से एक चीख निकली और दीपक बुझ गया। लगभग आधी रात का समय था, घनघोर वर्षा होकर अब केवल बूँदें गिर रही थीं। आकाश मेघाच्छन्न था। अपना हाथ तक न सुझाई पड़ता था। ऐसे दुस्समय पर भला कौन घर से बाहर निकलेगा? पथ जन-शून्य और नीरव था।

दीपक बुझ जाने पर अंधकार उनका गला दबाने लगा। उन्हें अब ऐसा मालूम होने लगा, मानो जल-वर्षा बढ़ गई है।

सांता ने चिल्लाकर कहा—"शिनडान, होशियार रहना! देखो, मैं तो अँधेरे में भी किसी-न-किसी तरह नाव खे ले जाऊँगा। लेकिन तुम बड़ी सतर्कता से चलना, क्योंकि आज तुमने चढ़ाई भी बहुत है।"

शिनसुकी, वास्तव में, बहुत शराब पी गया था, लेकिन उसके होश-हवास अब भी ठीक थे, पर सांता तो उससे भी अधिक पी गया था, और उससे कहीं ज्यादा मद-मत्त था।

शिनसुकी ने कहा—"मेरे लिये तुम न डरो। तुम्हें ही मुझसे अधिक सावधान रहना चाहिए।"

सांता ने कुछ उत्तर न दिया। इसके बाद फिर नीरवता छा गई।

दस-बारह गज जाने के बाद किसी ने शिनसुकी के सामने आकर कहा—"खबरदार, मुँह से शब्द न निकले, शराबी, बदमाश कहीं का।"

शिनसुकी चौंक पड़ा। उसे स्वप्न में भी आशा न थी कि कोई उसको भर्त्सना इस तरह करेगा। वह सँभलने भी न पाया था कि तलवार का वार उसके बाएँ कंधे पर हुआ। अगर शिनसुकी अपना शरीर नीचा करके मरोड़ न लेता, तो तलवार का आघात बड़ा ही गहरा होता। उसका बायाँ पुट्ठा निर्जीव-सा हो गया और आक्रमणकारी के तेज नाखून उसके शरीर में घुसने लगे।

शिनसुकी ने भागते हुए पूछा—"तू कौन है दुष्ट, बोल !"

दूसरे व्यक्ति ने, जो वास्तव में सांता ही था, उत्तर दिया—"शराबी, बदमाश मेरी आवाज़ भी नहीं पहचानता। मैं अपने मालिक के लिये आज तेरे प्राण लूँगा। तेरे प्राण लेने के ही लिये मैं इधर से तुझे लाया हूँ।" यह कहकर वह उसकी पदध्वनि के सहारे उसका अनुसरण करने लगा।

सामने ही होसोकावा के घर की चहार-दीवारी थी। शिनसुकी उसी के सहारे खड़ा होकर अपनी प्राण-रक्षा के लिये तेज़ी से हाथ घुमाने लगा। दो-तीन हाथ सांता के पड़ भी गए। शिनसुकी के हाथों में किसी ने बिजली-सी भर दी। तेज़ी से उसके हाथ चलने लगे, और सांता को वार करने का समय ही न मिला। सांता झुका हुआ शिनसुकी के नीचे के अंग पर तलवार मारकर गिरा देना चाहता था। उसने शिनसुकी को एक कोने में खड़ा रहने के लिये मजबूर किया, और लातें तथा घूँसों की बौछार सहन करता हुआ उसकी छाती के पास आकर खड़ा हो गया। दोनो एक दूसरे से गुथ गए। किसी को होश न रहा कि वह क्या कर रहा है। दोनों दो साँड़ की तरह लड़ रहे थे। शिनसुकी साँता का दाहिना हाथ, जिसमें तलवार थी, पकड़ने के उद्योग में था। अंत में वह सफल-कार्य भी हुआ, और सांता का दाहिना हाथ पकड़ कर उस पर अपने सारे शरीर का बल डाल दिया। सांता किसी तरह तलवार छोड़ना न चाहता था, और शिनसुकी उससे

तलवार छीनना चाहता था। दोनों अपने-अपने उद्योग में दो मतवाले हाथियों की तरह सिर-से-सिर भिड़ाकर लड़ रहे थे। सांता शिनसुकी से अधिक नशे में था, उसकी शक्ति धीरे-धीरे क्षीण हो रही थी, और हाथ शिथिल हो रहा था। शिनसुकी उसका दाहना हाथ मरोड़ने लगा और सांता के हाथ से तलवार छूटकर शिनसुकी के हाथ में आ गई। अब शिनसुकी दूने साहस से सांता पर झपटा, और कुछ ही क्षणों में उसे गिराकर उसकी छाती पर चढ़कर बैठ गया, और पागल की भाँति उसकी गर्दन पर तलवार रेतने लगा। तलवार हड्डियों से लगकर खटाखट बोल रही थी, लेकिन उसे विराम न था। सांता की आत्मा शरीर-पिंजर छोड़कर मुक्त हो गई।

अब शिनसुकी को होश आया। वह सांता के मृत शरीर को छोड़कर उठ खड़ा हुआ। उसे कुछ भी होश न था कि कब उसने सांता की हत्या कर डाली है। उसे तनिक भी ज्ञान न था कि कैसे उसने सांता की जान ली है। मानो उसने सब सुषुप्त-अवस्था में किया। सांता की हत्या, नहीं मरण, केवल एक भयावह स्वप्न था। उसके भी छोटे-छोटे घावों से रक्त निकलकर उसे सजग कर रहा था और विश्वास दिला रहा था कि वह स्वप्न न था। अब भी वह अर्ध जाग्रत् अवस्था में था—पाशविक प्रकृति अब भी दूर न हुई थी। उसने गुनगुनाकर कहा—

"एक आदमी को मार डालना कितना सहज काम है!"

अब उसके सामने अपनी जीवन-रक्षा का प्रश्न था। वह

भाग जाय, या अपने को पकड़वा दे, और स्वीकार कर ले कि वह अपराधी है—मनुष्य-हत्या का अपराधी है, और उसका दंड वहन करे ! लेकिन इसके पहले सूया से मिल आना चाहिए। सूया से मिलने के बाद भी तो वह दोनो काम कर सकता है। सामने ही उस मनुष्य का शव पड़ा हुआ है, जो एक घड़ी पहले हँस और बोल रहा था, और कुछ ही क्षण में निर्जीव होकर मिट्टी के ढेले की तरह निश्चेष्ट पड़ा हुआ है। उसका पैर उसके शव से छू गया—भय का एक तड़ित्-प्रवाह सारे शरीर में घूम गया। रोमावली खड़ी हो गई। वह हँसा, उस हँसी में क्या था, व्यंग्य या सहानुभूति !

उसको उस दिन मालूम हुआ कि इस शरीर की मशीन में कौन पुरजा चालक का काम करता है, किंतु अब वह किसी भाँति उस पुरजे को यथावत् नहीं कर सकता। दूसरे ही क्षण उसने सांता के शव और तलवार दोनो को उठाकर बहती हुई नदी में फेंक दिया। एक गुड़प-शब्द हुआ, और सांता का अस्तित्व संसार से जाता रहा। सांता की हत्या के सब प्रमाण नदी-गर्भ में समा गए। कौन कह सकता है कि सांता भी संसार में कभी था।

शिनसुकी बड़े वेग से सीजों के घर की ओर चला। बार-बार उसके कानों में सांता द्वारा कहे हुए शब्दों की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ रही थी—"अपने स्वामी की आज्ञा से और उसके हित के लिये मैं तुम्हारे प्राण लूँगा।"

सीजो का असली रूप अब प्रकट हो गया । विश्वास का पर्दा हट गया। सीजो को सब अभिसंधि विदित हो गई। उसे मालूम हो गया कि सोजी का घर कुटिल कुचक्रियों का अड्डा है। उसका काम है, लोगों को बहकाकर अपने यहाँ शरण देना, और फिर उनके प्राण लेना। सीजो ही ने मेरे प्राण लेने के लिये सांता को भेजा, वह मुझे बहकाकर यहाँ लाया, और प्राण लेने में कुछ उठा नहीं रक्खा, यह तो दूसरी बात है कि मैंने ही उसकी जीवन-लीला समाप्त कर दी। आह ! सूया पर क्या बीती होगी ? सूया के प्रति उसकी कुछ बुरी भावना अवश्य है। मैं उसके पथ में काँटा था, इसीलिये उसने मुझे दूर कर देना चाहा। कूभो जाने के बहाने से सोजी उससे पहले चला गया, यह इस बात का प्रमाण है कि सूया पर कोई-न-कोई आफ़त ज़रूर आई है। मालूम होता है, सीजो का घर-भर इस षड्यंत्र में सम्मिलित है। वहाँ इस तरह जाना ठीक नहीं। कुछ-न-कुछ प्रबंध करके जाना चाहिए। सूया से मिलना असंभव ही देख पड़ता है।

शिनसुकी जितना ही इन घटनाओं को सोचता, उतना ही अपने को धिक्कारता कि कैसे इतनी सरलता से वह बेवक़ूफ़ बन गया। सोचते-सोचते प्रतिहिंसा की भीषण आग उसके हृदय में भभक उठी। शिनसुकी फिर सोचने लगा—"जहाँ एक को मारा, वहाँ दो को। बात एक ही है। अंतर कुछ भी नहीं। अपराध एक ही है। एक की हत्या से भी प्राण-दंड मिलेगा

और दो की हत्या से भी वही दंड ! यदि आवश्यकता पड़ेगी, तो मैं सोजी, उस नारकीय कुत्ते, को भी उसके नौकर सांता के पास भेज दूँगा। फिर उस कुत्ते को मारकर अपने को पकड़वा दूँगा। मैं जब तक सूया से मिल न लूँगा, मरूँगा नहीं। मैं अपनी रक्षा करूँगा और सूया का पता लगाऊँगा। यदि सूया न मिली, तो फिर क्या ......"

यह विचार आते ही शिनसुकी की प्रतिहिंसाग्नि भावी आशंका के सामने शिथिल पड़ गई।

सोजी के घर के पास पहुँचकर शिनसुकी ने अपनी गति मंद कर दी, और दबे पैरों उसके दरवाज़े के पास आकर खड़ा हुआ। किवाड़ खुले हुए थे, वह निःशब्द भीतर घुसा। भीतर अंधकार छाया हुआ था। शिनसुकी कोने-कोने से परिचित था। टटोलता हुआ रसोई-घर के पास पहुँचा। द्वार पर कान लगाकर भीतर की आहट लेने लगा। उसे आशा थी—नहीं, विश्वास था कि उसे सूया का कातर शब्द सुनाई पड़ेगा, लेकिन भीतर नीरवता छाई हुई थी। उसे विश्वास था कि किवाड़े भीतर से बंद होंगे, उसने उन्हें बलपूर्वक तोड़ने के विचार से पीछे ठेलने के लिये हाथ लगाया, वैसे ही किवाड़े खुल गए। वे बंद न थे। रसोई-घर की एक दूसरी कोठरी में एक छोटा-सा प्रदीप जल रहा था, जिसका क्षीण प्रकाश वहाँ भी आ रहा था, किंतु फिर भी मनुष्य पहचानना मुश्किल था। उसने खूँटी पर टँगी हुई एक छुरी निकालकर अपने कपड़ों में छिपा ली। वह अभी सीढ़ियों के

पास ही पहुँचा था कि किसी ने प्रश्न किया—"कौन है ? सांता ?"

प्रश्न करनेवाली सीजो की पत्नी थी। प्रश्न भी इतने धीमे स्वर से किया गया था कि मुश्किल से सुना जा सकता था।

शिनसुकी ने भी अपना स्वर बिगाड़कर कहा—"हाँ, मैं हूँ।"

सीजो की स्त्री ने पूछा—"क्यों, सब ठीक हो गया न ? सकुशल समाप्त कर आए ? गड़बड़ तो नहीं हुआ ?"

सीजी की स्त्री के कंठ-स्वर से ममता और चिंता दोनों टपकी पड़ती थीं। वह अभी तक अँगीठी के पास बैठी हुई उत्कंठा से सांता के आने की राह देख रही थी। दूसरी विचित्र बात यह थी कि आज नौकरों का पता बिल्कुल न था। जो नौकर बाहर दालान में सोया करते थे, उनका भी पता न था। सब-के-सब कहीं-न-कहीं भेज दिए गए थे। शिनसुकी ने मन-ही-मन कहा—"तब ज़रूर सूया कहीं भेजी गई है!"

उसने सांता के ही स्वर में उत्तर दिया—"कोई डर की बात नहीं है, मैंने सब समाप्त कर दिया है।"

यह कहते हुए वह पर्दा हटाकर सीजो की स्त्री के सामने जाकर खड़ा हो गया। और भयानक किंतु दबे हुए स्वर में पूछा—"बोल, सू-चान कहाँ है।"

उसने घबराकर कहा—"अरे, तुम शिनडान हो।"

वह बेहोश होने का उपक्रम करने लगी, किंतु अपने को

सँभालकर उसके मुँह की ओर ताकने लगी। उसकी सारी विचार-धाराएँ उसके मस्तिष्क में घूम-घूमकर कोई-न-कोई बहाने की खोज में चक्कर लगा रही थीं। किंतु शिनसुकी की भयानक मुद्रा उसे स्वस्थ होकर बहाना ढूँढने ही न देती थी। अभी तक शिनसुकी अपनी उधेड़-बुन में ही लगा हुआ था, उसे अपनी दशा निहारने का अवसर ही न मिला था। मलिन प्रकाश में उसने देखा कि उसके कपड़े मिट्टी और रक्त से लथ-पथ हैं, घावों से खून अभी तक निकल रहा है, जो बाहर जम-जमकर काला हो रहा है। वह इस समय पिशाच की तरह भयंकर था। शिनसुकी स्वयं अपना वेश देखकर चौंका। उसे विश्वास हो गया कि वह उससे किसी तरह भी अपना अपराध छिपा नहीं सकता।

सोजी की स्त्री बड़ी ही साहसी और चतुर थी। शिनसुकी का वह वेश देखकर बात-की-बात में वह सब हाल समझ गई। उसने कहा—"शिनडान, यह तो कहो, तुम क्या कर रहे थे?"

शिनसुकी ने सक्रोध कहा—"तुम पूछती हो कि मैं क्या कर रहा था, अच्छा सुनो। मैं अभी-अभी तुम्हारे सांता के प्राण लेकर यहाँ आया हूँ, और अगर तुमने भी न बतलाया कि सू-चान कहाँ है, तो तुम्हारी भी कुशल नहीं है। मैं तुम्हें भी न छोड़ूँगा। एक हाथ तो रँगा ही है, अब दूसरा भी तुम्हारे खून से रँग डालूँगा।"

यह कहकर उसने छुरी का सिरा उसके गालों से लगा दिया। किंतु वह उसी तरह निर्भीकता से खड़ी रही। जरा भी न काँपी, न झिझकी।

उसने बिल्कुल बेपरवाही से उत्तर दिया—"सू-चान ऊपर होगी ; और कहाँ है।"

यह कहकर उसने तंबाकू पीने की नली में तंबाकू भरकर आग लगाई, और पीने लगी। उसकी भाव-भंगी बिल्कुल ही निर्भीक और साहस-पूर्ण था।

यह साजो की दूसरी उपपत्नी थी। सीजी इसे कहाँ से लाया था, किसी को नहीं मालूम। लोगों का अनुमान था कि यह योशी-बारा की रहनेवाली है, जहाँ पर उसने अपने कुछ दिन अवश्य बिताए थे। लेकिन आज तक किसी को भी न मालूम हुआ था कि उसका जन्म-स्थान कहाँ है। इस समय अधेड़ अवस्था की थी। यौवन-बेला के अपराह्न-काल में भी वह सुंदरी देख पड़ती थी, जैसे किसी खँडहर देखकर प्रतीत होता है कि कभी वह एक सुंदर मनोहर भवन रहा होगा। यद्यपि इस समय वह कुछ स्थूल शरीर की हो गई थी, किंतु उसका ढला हुआ सौंदर्य अब भी चित्ताकर्षक था। ज़माने के हेर-फेर ने, दुनिया की दुरंगी चालों ने, संसार की दग़ाबाज़ियों ने उसे साहसी और दृढ़-चित्त बना दिया था। शिनसुकी की नंगी छुरी की नोक उसके गालों से लग रही थी, किंतु उसके हाव-भाव से जरा भी भय न टपकता था। उसके माथे पर ज़रा-सा बल न पड़ा। वह

वैसी ही निर्दोष की भाँति अकड़ी बैठी रहो और सानंद अपना पाइप * पीती रहो।

शिनसुकी ने सोचा कि ऊपर की तलाशी तो उसे लेना ही है, लेकिन अगर इसको छोड़कर जाता है, तो यह भाग जायगी, और फिर सूया का पता देनेवाला कोई न रहेगा। यही नहीं, उसकी जान पर भी आफ़त आ सकती है, क्योंकि वह उसका भेद जान गई है। अतः उसने उसे बाँधकर डाल देना ही उचित समझा। एक कोने में पड़ी हुई रस्सी से वह उसे बाँधने लगा।

सीजो की स्त्री ने छूटने का प्रयत्न करते हुए कहा—"यह क्या हरकत है, बदमाश, कापुरुष !"

उसे विश्वास था कि शिनसुकी निस्तेज और निर्वीर्य है, उसमें ज़रा भी ताक़त नहीं है, किंतु उसके एक ही घूँसे ने उसे बेहोश करके निश्चेष्ट कर दिया। एक आदमी की जान लेकर शिनसुकी मानव-शरीर के बारे में सब जान गया था कि किस तरह मानव-अंग तोड़े, मरोड़े और दबाए जाते हैं, कैसे सहज ही में उन्हें बाँधा जा सकता है। थोड़ी ही देर में, बिना किसी कठिनता के उसने उसके हाथ-पैर बाँधकर एक कोने में डाल

* जापान और चीन दोनों देशों में स्त्रियाँ बेरोक-टोक धूम्र-पान करती हैं। तंबाकू पीने के लिये एक लंबी नलिका होती है, जिसके एक सिरे पर सूखी तंबाकू रखने का स्थान होता है, और दूसरी ओर से मुँह में लगाकर उसका धुआँ खींचते हैं। यह बिलकुल चुरुट की तरह होता है, किंतु उससे लंबा होता है।

दिया। यही नहीं, उसने उसके मुँह में कपड़ा ठूँसकर उसे वाक्-शक्ति से भी हीन कर दिया।

फिर कोठरी में जलती हुई लालटेन लेकर वह ऊपर दौड़ा। कमरे, कोठरी, परदों के पीछे, रत्ती-रत्ती जगह छान डाली, किंतु सूया का कहीं नाम-निशान तक न था। वह पहले ही जान गया था कि सूया से भेंट नहीं होगी, किंतु भ्रम अब विश्वास में परिणत हो गया। नैराश्य ने उसे बिल्कुल पागल-जैसा उद्विग्न कर दिया। एक ही साँस में वह नीचे उतर आया, और आशा-निराशा, दोनो से लड़ता हुआ वह नीचे के भी कमरे-कोठरी सूया की खोज में देखने लगा। तिल-तिल जगह देख डाली, लेकिन सूया का पता न था।

अंत में सीजी की स्त्री के पास आकर फिर कहा—"बताओ, सूया को कहाँ छिपा रक्खा है, नहीं तो तुम्हारी भी जान नहीं बचने की।"

उसके मुँह से कपड़ा निकाल लिया और उत्तर पाने के लिये उसके मुँह की ओर देखने लगा। उसे चुप देखकर शिनसुकी ने फिर उसके गालों से छुरी लगाते हुए कहा—"देखो, ठीक-ठीक उत्तर दो, नहीं तो यह तुम्हारी गर्दन में घुसेड़ दी जायगी।"

सीजी की स्त्री अब भी धीरता के साथ आँख बंद किए हुए लेटी थी। थोड़ी देर बाद उसने घृणा-भरी दृष्टि से देखते हुए कहा—"मैं तुम-जैसे गधे छोकरों की बँदर-घुड़कियों से नहीं

डरनेवाली। बार-बार क्या धमकी देते हो? मारना है, तो मारते क्यों नहीं? सामने ही तो पड़ी हूँ। मारो, तुम्हें रोकता कौन है?"

इतना कहकर उसने फिर आँखें बंद कर लीं और पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चेष्ट और निर्वाक् लेटी रही।

एकाएक शिनसुकी को याद पड़ा कि वह अपनी खोज में नौकरों के घर देखना भूल गया है। अगर वहाँ दासियाँ होंगी, तो उनसे इस दुष्टा की अपेक्षा जल्दी और सहज में पता लग जाने की संभावना है। वह उनकी कोठरियों की ओर दौड़ा। वहाँ भी किसी का पता न था। कोठरियाँ बाहर से बंद और भीतर से शून्य थीं। किसी के भी रहने का चिह्न न मिला। उनकी अनुपस्थिति इस बात की सूचना दे रही थी कि सब नौकर कहीं किसी बहाने से भेज दिए गए हैं, जिससे इस कुचक्र की खबर उन्हें न हो।

शिनसुकी निराश होकर फिर सीजी की स्त्री के पास आया, और उसे खोलकर उसके पैरों में गिरकर कहा—"मुझे क्षमा करो, मैं स्वयं अपने गर्हित कार्य पर लज्जित हूँ। मुझे क्षमा करो, मुझ पर दया करो, मेरे हाल पर तरस खाओ। दया करके बता दो कि सूया कहाँ है?"

उसने सक्रोध उत्तर दिया—"मुझसे अधिक तो तुम्हें मालूम होना चाहिए, क्योंकि तुम तो सारा घर खोज आए हो। अब मुझसे क्यों पूछते हो। मैं क्या जानूँ कि सूया कहाँ है? यह मेरा काम नहीं है!"

शिनसुको ने अपना क्रोध मन-ही-मन दबाते हुए कहा—"क्यों बनती हो। तुम्हें क्या लाभ है। यह तो सहज ही जाना जा सकता है कि तुम्हीं सब लोगों ने मिलकर सूया को कहीं ग़ायब कर दिया है। कुछ भी कठिन बात नहीं है और न ज्यादा बुद्धि को आवश्यकता ही है, साफ़ है कि तुम्हारे ही षड्यंत्र से सूया कहीं ग़ायब हो गई है। मैंने हमेशा तुम लोगों के साथ भलमंसी का व्यवहार किया है, हमेशा तुम लोगों को ख़ुश रक्खा है। अभी भी, मैंने यहाँ आते ही अपना अपराध स्वीकार कर लिया कि मैंने सांता को मारा है। अब तो सूया के साथ रहने की आशा कर ही नहीं सकता, न उससे विवाह करके सुखी ही हो सकता हूँ, न मैं तुम्हारे पति को ही पकड़वाऊँगा; मैं सूया को एक बार केवल देखना चाहता हूँ, उससे दो बातें करके उससे चिर बिदा लेना चाहता हूँ। अपने मरने के पहले केवल एक बार उसे देखना चाहता हूँ। कल सुबह होते ही मैं अपने को पकड़वा दूँगा। दया करके मेरी दशा तो ज़रा सोचो। क्या बतला सकती हो, मैंने कब तुम लोगों के साथ कभी बुराई की है। यह मेरी अंतिम अभिलाषा है—मरणासन्न व्यक्ति की अंतिम भीख है, क्या तुम इसे अस्वीकार कर सकोगी? मैं विश्वास दिलाता हूँ कि मैं एक शब्द भी अपने मुँह से न निकालूँगा, जिससे तुम पर या तुम्हारे पति पर किसी तरह की आँच आवे। पुलिसवाले भी चाहे जितनी यंत्रणा दें, लेकिन मैं तुम लोगों के विरुद्ध एक शब्द भी न कहूँगा।"

सोजी की स्त्री ने कहा—"अच्छा शिनडान, सुनो। मैंने तुम्हारी सब बातें सुनीं, लेकिन मैं समझी जरा भी नहीं कि तुम्हारा मतलब क्या है। कैसा षड्यंत्र और कैसा मेरा और मेरे पति का उससे संबंध। मेरा पति और मैं किस तरह दोषी हूँ, यह मुझे स्वयं नहीं मालूम। तुम मेरी रक्षा कैसे करोगे? कुछ भी मेरी समझ में नहीं आता। तुम होश में हो या यह तुम्हारा प्रलाप है। मैं पूछती हूँ कि जो-जो अपराध हम पर लगा रहे हो, क्या इसके प्रमाण भी तुम्हारे पास हैं? मुझे तो ऐसा मालूम होता है कि सांता को मारकर तुम बिल्कुल पागल हो गए हो—उसके खून ने तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट कर दी है। तुम इस समय अपने आपे में नहीं हो। सांता के कामों का उत्तरदायी मेरा स्वामी नहीं हो सकता और न सांता का काम मेरे पति का काम ही है। तुम चाहे जो कुछ करो, मुझसे मत-लब! चाहे अपने को पकड़वा दो, चाहे मेरे पति से समझौता करो, चाहे जो कुछ करो, मुझसे कुछ मतलब नहीं है। तुमसे मेरा क्या संपर्क है? मैं कुछ नहीं जानती!"

शिनसुकी ने पूछा—"अगर तुम निर्दोष हो, तो बताओ सूया कहाँ है, और सीजी सान कहाँ गया है?"

शिनसुकी के इस विनीत आचरण से उसका साहस दूना हो गया था। रहा-सहा भय भी जाता रहा था। उसने बड़ी शान से अपने वक्षस्थल पर हाथ रक्खे हुए व्यंग्य स्वर में कहा—"तुम पूछते हो मेरा स्वामी कहाँ है। मेरा स्वामी आज-

कल रोज रात को गायब रहता है। मैं उसकी गति-विधि पर दृष्टि नहीं रखती। मैं नहीं जानती कि वह कहाँ जाता और क्या करता है। और सू-चान ? सू-चान आज शाम को ही अपनी तीनों दासियों के साथ 'हीरोकोजी' में नाटक देखने गई थी। लेकिन उसका अभी तक न लौटना अवश्य विस्मय-कर है। मुझे भी डर होता है कि वह किसी-न-किसी विपद् में अवश्य फँस गई है।"

शिनसुकी का विचार-स्रोत फिर बदल रहा था। वह मन-ही-मन कुढ़कर कह रहा था—"नारकीय कुतिया, किस उपाय से, किस यंत्रणा से तेरी जान लूँ।" उसे विश्वास हो गया कि इससे सूया का पता नहीं लगने का। जब तक सूया का पता नहीं लगता, वह भला कैसे अपने को पकड़वा सकता है। एक महीने, दो महीने, साल-छः महीने वह अपनी रक्षा करेगा, और सूया का पता लगावेगा। लेकिन तब तक तो सांता की हत्या की बात छिपी नहीं रह सकती। सबसे पहले यही औरत उसे पकड़वा देने की चेष्टा करेगी, क्योंकि यह सब जानती है, और मैं इसके सामने स्वीकार भी कर चुका हूँ।

शिनसुकी इसी तरह के विचारों में मग्न था, और उसके सामने आराम से निश्चिन्त और निर्भय बैठी हुई सीजी की स्त्री अपना हुक्का पी रही थी। दोनों की दृष्टि मिली, और शिनसुकी का हृदय घृणा से भर गया।

वह फिर सोचने लगा—"यही उस दुष्ट सीजी की पत्नी है।

सीजी इसे अवश्य प्राणों के समान प्यार करता होगा, तभी तो यह उसका भेद नहीं खोलती। यदि इसके भी प्राण ले लूँ, तो मेरी सूया का बदला पूरा हो जायगा। आह! इस स्त्री की कैसी घृणा-भरी दृष्टि है, कैसा दर्प है—उसे कितना विश्वास है कि वह निरापद् है, सुरक्षित है। उसे नहीं मालूम कि उसकी जीवन-लीला समाप्त होनेवाली है—उसके जीवन-प्रदीप का तेल जल गया है, अब दीपक भी बुझने ही वाला है। यही तो विधाता का हास्य है, विद्रूप है, व्यंग्य है! सिर्फ़ गर्दन को पकड़कर एक बार मरोड़ देना और फिर जोर से झिटककर दबा देना, बस, कंकाल-मात्र रह जायगा। हाय! मनुष्य-जीवन कितना छोटा और व्यंग्य-पूर्ण है!"

दूसरे ही क्षण उसके मस्तिष्क में एक दूसरा विचार आया जो पहले से भी अधिक भयंकर था। उसने अपने पैरों के पास पड़े हुए सन के रस्से को उठा लिया, और बात-की-बात में उस साहसी रमणी के गले में डाल दिया, और क्षण-भर पहले जो कुछ उसने सोचा था, वह कार्य-रूप में परिणत करने लगा।

क्षण-भर में काम खत्म हो गया। एक स्त्री की जीवन-लीला समाप्त हो गई। एक तरह की निश्चेतना और अवसाद से शिनसुकी का शरीर क्लांत हो गया। उसने एक लंबी साँस लेकर कहा—"मैं अब पूरा ख़ूनी हूँ। एक ही रात में दो ख़ून!" शिनसुकी की आत्मा सिहर उठी। उसने अपने हाथ-पैर देखे। वहाँ भी उसे पैशाचिकता की कालिमा दिखाई दी। अगर वह

इसी तरह जाएगा, तो तुरंत ही पकड़ लिया जायगा, क्योंकि प्रमाण तो उसके साथ ही हैं। इन कपड़ों को उतार देने में ही कल्याण है।

उसने अपने कपड़े उतार डाले, और खून के दाग़ धोने लगा। अपनी समझ में सब रक्त-चिह्न मिटाकर उसने सीजी का एक काली धारियोंवाला वस्त्र पहन लिया, जो बिल्कुल ठीक बैठ गया।

सीजी का वस्त्र पहनने के बाद वह उसके संदूक़ों की तलाशी लेने लगा। सब कुछ ढूँढ़ने के बाद उसे केवल तीन रिमो मिले। उसने सब सामान वैसे ही फैला रहने दिया, जिसमें यह दुर्घटना चोरी का ही कारण समझी जाय।

अपने पुराने वस्त्रों को लपेटकर एक बड़े पत्थर के साथ बाँधकर वह बाहर आया और नहर में फेंक दिया। उसने वह प्रमाण भी नष्ट कर डाला, जो सीजी का स्त्री या सांता के पक्ष में होकर उसके विरुद्ध गवाही देते।

एक बार चारों ओर देखकर वह घर से बाहर निकला। पानी बरसना बंद हो गया था। आकाश धोई हुई नीली चट्टान की तरह स्वच्छ और निर्मल था। चंद्रमा हँसता हुआ दोनों हाथों से अपनी चाँदनी लुटा रहा था। शिनसुको ने एक बड़ी काली टोपी से अपना मुँह छिपाए हुए सड़क पर आकर एक ओर का रास्ता पकड़ा।

शिनसुकी पहला चौराहा निर्विघ्न पार कर गया।

तृतीय खंड

शिनसुकी के पिता और किंज़ो-नामक व्यक्ति में गहरी मित्रता थी। शिनसुकी अपने लड़कपन में अपने पिता के साथ किंज़ो के यहाँ जाया करता था। उस रात को ख़ून करने के बाद शिनसुकी किंज़ो की शरण आया।

किंज़ो का प्रारंभिक जीवन एक तूफ़ानी जीवन था। न-मालूम कितनी आपदा और विपत्ति उसे पग-पग पर सहनी पड़ी थी। उसका भी जीवन निष्पाप न था। ऐसा कोई भी पाप-पुण्य न होगा, जिसे किंज़ो ने न किया हो। नीच-से-नीच पाप और उच्च-से-उच्च पुण्य उसने किया था। दुनिया के दो पर्दों के भीतर जो कुछ छिपा हुआ है, उसने सब देख डाला था! किंतु पचास वर्ष की अवस्था होते-होते किंज़ो ने अच्छी जायदाद पैदा कर ली थी, और अब सब निंद्य कर्म छोड़कर वह भले नागरिक की भाँति जीवन व्यतीत कर रहा था। उसकी गणना धनी और मानी आदमियों में हो गई थी। वह हरएक की यथाशक्ति सहायता करने के लिये तैयार रहता, और सहर्ष सहायता करता। अपनी दया और सज्जनता के लिये वह नगर-भर में विख्यात था। शिनसुकी भी इसी आशा से किंज़ो के पास आया था।

शिनसुकी ने सांता की हत्या का हाल तो कहा, लेकिन सोजी की स्त्री-हत्या की बात वह छिपा गया। उसने सब हाल कहकर

अपने को घर में छिपाने की प्रार्थना की। साथ ही यह भी प्रतिज्ञा की कि जहाँ सूया का पता मिल गया, वह अपने को पकड़वा देगा, और न्यायानुसार दंड ग्रहण करेगा।

शिनसुकी की बात सुनकर किंज़ो ने कहा—"अगर तुम मेरी सहायता चाहते हो, तो मैं देने के लिये तैयार हूँ। लेकिन अब भी तुम मुझसे अपना भेद छिपा रहे हो। तुम्हारा कथन है कि तुम सांता को मारकर सीधे यहाँ चले आ रहे हो। ठीक है, तुम्हारे शरीर पर घाव तो हैं, लेकिन तुम्हारे कपड़े साफ़ हैं; यह कैसे संभव हो सकता है।"

चतुर किंज़ो की आँखों को शिनसुकी धोखा न दे सका। वह डरकर चुप हो गया। सीज़ो के घर में आने के पहले वह अपनी समझ में ख़ून के धब्बे साफ़ कर चुका था, किंतु किंज़ो के कहने पर उसकी दृष्टि फिर अपने शरीर पर गई—हाथ, पाँव और नाख़ूनों में ख़ून जमकर सूख गया था। उसकी गर्दन में भी ख़ून लगा हुआ था। बाईं कनपटी पर के बाल ख़ून से भीगकर चिकट गए थे। ये सब प्रमाण देखकर शिनसुकी ने अपना सब हाल कह दिया—कुछ भी न छिपाया। जैसे उसने सांता का ख़ून किया, और फिर आकर सीज़ो की स्त्री का भी ख़ून किया, सब आदि से अंत तक सच्चा हाल कह दिया।

किंज़ो ने सब हाल सुनकर कहा—"हाँ, अब ठीक है। अब मैं तुम्हारी सहायता के लिये तैयार हूँ। जिस तरह तुमने दिल खोलकर अपना सब भेद कह दिया है, मैं भी उसी तरह तुम्हारी

सूया का पता लगाऊँगा। उसके पता लगाने में मैं तुम्हारी सहायता करूँगा। लेकिन यह अच्छी तरह समझ लो कि तुम्हें अपनी प्रेमिका का पता लगाने के बाद, अपने को पकड़वा देना पड़ेगा। इस विषय को मैं बहुत अच्छी तरह जानता और समझता हूँ। मेरे प्रारंभिक जीवन में, मुझसे भी दो-तीन खून हो गए हैं, इसलिये इस विषय में तुमसे अधिक मुझे ज्ञान है। पाप का मजा यदि एक बार मिल जाता है, तो फिर उसके चंगुल से छूटना यदि असंभव नहीं, तो कठिन अवश्य हो जाता है। यदि एक बार भी पाप से प्रीति हो गई, तो फिर उसकी ओर से कभी छुटकारा नहीं मिलता। यह मैं जानता हूँ कि तुम कभी उद्दंड और उद्धत स्वभाव के नहीं रहे, सदैव निरीह और सरल प्रकृति के थे, किंतु इस समय अब बात दूसरी है। शिनसुको सान, अब पद-पद पर तुम्हें पाप अपनी ओर आकर्षित करेगा। उसके प्रबल आकर्षण से अपनी रक्षा करना तुम्हारा कर्तव्य होगा, लेकिन क्या उस लोभ से तुम अपनी रक्षा कर सकोगे। अब तुम उस जगह स्थित हो, जहाँ से एक क़दम भी इधर-उधर होने से तुम्हारा जीवन भयावह और नारकीय हो सकता है। जब तक तुम अपने पापों पर मनन करना, और उन पर पश्चात्ताप करना न सीखोगे, तब तक पाप की प्रबल शक्ति तुम्हें अपनी ओर खींचती ही जायगी, तुम नीचे ही गिरते जाओगे, यहाँ तक कि तुम शैतान हो जाओगे या उससे भी बढ़ जाओगे, कौन जानता है। तुम मुझे

मनुष्यत्व-हीन पुरुष समझते होंगे, जब मैं कहता हूँ कि तुम्हें अपने को पकड़वा देना पड़ेगा। परंतु अगर तुम्हारा जीवन इस समय बचा भी लिया जाय, तो तुम न अपना किसी तरह उपकार कर सकते हो और न समाज का—वरन् अपकार के अतिरिक्त कुछ उपकार नहीं हो सकता। तुम्हारी जीवन-रक्षा करने के अर्थ होंगे दो-एक प्राणियों की और हत्या !"

शिनसुकी किंज़ो की बात का कुछ भी अर्थ न समझा। किंज़ो का क्या तात्पर्य है, यह उसकी समझ में नहीं आया। क्या उसने सब भेद नहीं कह दिया ? क्या वह सच्चे हृदय से अपने कर्म पर पश्चात्ताप नहीं कर रहा ? फिर किंज़ो का इन बातों से क्या मतलब है ? शिनसुकी ने बार-बार प्रतिज्ञा की कि वह ज़रूर सूया का पता लग जाने के बाद अपने को पकड़वा देगा।

जैसे कोई भयानक जानवर छेड़े जाने पर भीषण और भयंकर हो उठता है, फिर दूसरे ही क्षण शांत होकर दुम हिलाने लगता है, ठीक वैसी ही दशा शिनसुकी की थी। भयंकर और बीभत्समय शिनसुकी अब फिर शांत और निरीह शिनसुकी हो गया था। पिछली घटनाएँ सब स्वप्नवत् मालूम होती थीं, मानो वह शैतान द्वारा दिखलाया हुआ एक भयावह स्वप्न था। किंज़ो ने उसे भागकर आसियाबोशू जाकर एक दूसरे अपने मित्र के यहाँ छिपने की सलाह दी। किंतु वहाँ से जाना सूया को बिलकुल खो देना था।

सीजो की स्त्री की हत्या से शहर में कुछ सनसनी न फैली थी। एक साधारण घटना को भाँति सकुशल बीत गई थी।

जिस रात को शिनसुकी ने आकर किंजो के यहाँ शरण ली थी, उसी के सबेरे, किंजो घूमने के बहाने घटना-स्थल तक गया। 'ओ हो शा कावा' के जिमींदार की अट्टालिका के समीप जाकर वह इधर-उधर देखने लगा। कहीं भी खून का एक धब्बा तक न था, और न वह छाता ही था, जिसे शिनसुकी भूल आया था। घंटों की घनघोर वर्षा ने उसके विरुद्ध सब प्रमाणों पर पानी फेर दिया था। अगर कोई वस्तु अवशेष थी तो वह कागज का एक छोटा-सा डिब्बा, जिसमें शिनसुकी सूया के लिये मिठाई लाया था। परंतु वह भी रौंदा और कुचला हुआ पड़ा था। किंजो ने बढ़कर जोर से एक ठोकर मारी, और वह नदी-धारा में पड़कर नाचती हुई लहरों के साथ सागर की ओर चल दिया।

इसके बाद किंजो फिर सीजी के घर की ओर गया। वहाँ एक पुरानी जान-पहचान के मल्लाह से मिलकर सब हाल पूछा। उसे मालूम हुआ कि सीजी का शक सांता पर है। उसे विश्वास है कि उसकी स्त्री का हत्याकारी सांता है। शिनसुकी को मारकर सांता घर आया, और फिर न-जाने क्यों उसकी नियत बिगड़ गई, और उसकी स्त्री को भी हत्या करके घर की सब जमा-पूँजी लेकर चंपत हो गया। शिनसुको पर उसे

जरा भी शक न था। शिनसुकी को देखकर सीजी को आश्चर्य जरूर होता, लेकिन फिर भी उस पर शक न होता।

चारों ओर से निश्चित होकर किंजो घर आया, और अपना एक ऊनी वस्त्र देते हुए शिनसुकी से अपना वस्त्र उतार देने को कहा। उसके मुख पर उसने दो-तीन जाली मसे बना दिए। जिसमें उसकी वास्तविकता बिल्कुल छिप गई। अब किंजो भी शिनसुकी की ओर से निश्चित हो गया। उसे विश्वास हो गया कि कोई भी अब उसे पहचान न सकेगा।

शिनसुकी दिन में मोचियों का और रात को खोंचेवाले का वेश बनाकर फूकागावा की गलियाँ सूया की खोज में छानने लगा।

वर्ष समाप्त हुआ। दूसरा नया वर्ष लगा। यह बुनेशी संवत् * का आठवाँ वर्ष था। शिनसुकी उस दिन ताकाबाशी में, सीजी के घर के आस-पास, घूमकर ही टोह लेता रहा। उस घटना के बीस-पचीस दिन बाद, सीजी एक दूसरी स्त्री ले आया था। उसका कार-बार उसी तरह चल रहा था। शिनसुकी को विश्वास हो गया था कि सीजी ने सूया को कहीं-न-कहीं अवश्य बेच दिया है।

एक दिन अपना शक मिटाने के लिये वह ताचीबाना-चो में अपने सेठ के यहाँ भी गया। घर बिल्कुल उजाड़

* बुनशी संवत् का आठवाँ वर्ष गणना से विक्रमी-संवत् का १८८२वाँ वर्ष होता है।

पड़ा था, यानी कोई रहता ही नहीं। दूकान बंद थी और बाहर-भीतर, सब जगह निस्तब्धता छाई हुई थी, जो चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी कि सूया यहाँ नहीं आई। उसे यह भी मालूम हुआ कि जिस दिन से सूया गई है, उसी दिन से वे बीमार पड़े हैं, और अभी तक कुछ अच्छे लक्षण नहीं दिखलाई पड़ते। शिनसुकी बिना किसी से मिले या कहे-सुने चुपचाप चला आया।

सोजी के घर के आस-पास, सब जगह पता लगा लिया, कहीं भी सूया न थी। शिनसुकी अब गीशा-वारवनिताओं की ओर झुका। जहाँ गीशा के अड्डे थे, वहाँ वह वेश बदलकर जाता, और सूया का पता लगाता। कूभी, हशीबा, इरिया, कोई ऐसी जगह न बची जहाँ शिनसुकी न गया हो। जहाँ किसी नई गीशा का समाचार मिला, वहाँ तुरंत जाकर उसने भली प्रकार पूछ-ताछ की। पर सूया का कहीं पता न था।

वर्ष का दूसरा महीना भी बीत गया, किंतु शिनसुकी वैसे ही अज्ञात बना रहा, जैसा कि दुर्घटनावाली भयानक रात्रि में था। वसंत-ऋतु शुरू हो गई। हरी-हरी नई-नई पत्तियाँ निकल-कर पेड़ों को सजाने लगीं, बौर निकलकर वायु सुरभित करने लगे। ठिठुराते और कँपाते हुए जाड़े की जगह अब मधु-मास की मनमोहक उष्णता, वायु-वाहन पर सवार होकर इतराने लगी। वायु की उष्णता ने जर्जरित शिनसुकी के हृदय में भी चंचलता और उत्तेजना भर दी, वसंत-ऋतु ने उसकी मुरझाई हुई हृदय-कली में नव-जीवन भर दिया। वह प्रेम और शोक,

आशा और निराशा का बोझ वहन किए अपनी सूया की खोज में दर-दर मारा-मारा फिर रहा था। स्वप्न में भी यदि सूया से भेंट हो जाय, तो वह उतने ही से धन्य हो जायगा।

चैत्र-मास की एक शाम को किंजो ने कहीं से लौटकर कहा—"शिनसुकी सान, मुझे ऐसा मालूम होता है कि नाकाचो की सोभीकोचो गीशा ही तुम्हारी प्रेमिका सूया है। मैंने आज फूकागावा में 'ओग्रनाया' चाय-घर में दो-तीन मित्रों को निमंत्रण दिया था। मैंने उनके विनोदार्थ कई एक गीशाओं को भी बुलवाया था। उनमें से एक का सादृश्य तुम्हारी सूया से बहुत कुछ मिलता है। उसकी आँखें बड़ी-बड़ी और मदमाती थीं, पलकें भारी और मुख अतीव सौंदर्य-पूर्ण था, किंतु उसकी सुंदरता कुछ मरदानापन लिए हुए थी, जो बहुत ही आकर्षक था। जब वह मुसकिराती थी, तो सामने का एक दाँत ओठों के बाहर आ जाता था, जिससे उसका सौंदर्य द्विगुणित हो जाता था। जब वह बातें करती है, तो कभी-कभी अपना ओठ नीचे की ओर झुकाकर एक विचित्र प्रकार से उन्हें मरोड़ती है। उसका स्वर इतना मीठा और साफ़ था, जो कानों में पहुँचकर तुरंत हृदय पर आघात करता था। तुम्हारे वर्णन से उसका इतना सादृश्य मिल गया, तो मैंने उसके बारे में पूछ-ताछ भी की। पूछने से मालूम हुआ कि तोकूबी नाम का एक जुआरी उसका संरक्षक है। साथ-साथ यह भी पता चला है कि तोकूबी बड़ी ही नीच-प्रकृति का है, यहाँ तक कि उसके

साथी भी उससे घृणा करते हैं। उससे और सीजी से बड़ी घनिष्ठता है। इन सब प्रमाणों से जरा भी संदेह नहीं रह जाता कि सोभीकीची गीशा ही तुम्हारी सूया है।"

शिनसुकी ने भी सब सुनकर यही निर्धारित किया कि वही उसकी सूया है।

किंजो फिर कहने लगा—"आजकल सोभीकीची विलासी-समाज की लाड़ली अभिनेत्री हो रही है। जिसे देखो, वही उसके लिये पागल हो रहा है। अभी डेढ़ ही महीने से सोभी-कीची नाकाची में बैठने लगी है, लेकिन फिर भी उसके सौंदर्य और कलकंठ की ख्याति चारो ओर सुरभि की भाँति फैल गई है। हर आदमी के ओठ पर सोभीकीची का नाम है। न-मालूम कितने उसके प्रेमिक हैं। उसके प्रेमी सभी धनी और मानी आदमी हैं। एक प्रेमिक किसी महाजन का लड़का है, एक हाटामोटो ❀ का सैनिक पदाधिकारी है। इसी तरह नगर के पाँच-छः धनी और संभ्रांत युवक उसके पीछे पागल हुए जा रहे हैं। पानी की तरह अपना धन बहा रहे हैं, लेकिन सफलता किसी को मिली है या नहीं, ठीक कहा नहीं जा सकता। यह भी सुनने में आया है कि तोकूबी स्वयं उसके प्रेम में उलझा है, जहाँ दूसरा आदमी आता है, बीच में पड़-कर उसे भगा देता है। उसके मारे किसी की भी दाल नहीं

❀ 'हाटामाटो' शोगुन-वंश के राज्य-काल में, शरीर-रक्षकों का नाम है। राजा के समीप होने के कारण उनका विशेष मान होता था।

गलने पाती। जिसके घर में सोभीकोची रहती है, वह तो कूबी की प्रेमिका का ही घर है, जो उसकी उपपत्नी होकर रहती थी। ऐसा कोई दिन नहीं बीतता, जिस दिन उसके पीछे झगड़ा न होता हो। दस-बारह दिन से तोकूबी की उपपत्नी का, जिसका मकान है, पता नहीं है। उस दिन से सोभीकोची ही उसकी मालकिन है। लोगों का अनुमान है कि अभी तक सोभीकोची तोकूबा की अंकशायिनी नहीं हुई है।"

"जहाँ तक मालूम होता है, अभी तक सोभीकोची ने अपने को तोकूबा के हाथों में समर्पित नहीं किया है। कुछ लोग कहते हैं कि तोकूबो ने उस पर विजय पा ली है, किंतु कोई प्रमाण नहीं है। लोग ईर्षा-वश ऐसे अपवाद उड़ा दिया करते हैं। जितनी बातें सुनने में आती हैं, उनमें से आधी झूठ समझना चाहिए। सोभीकोची को देखकर कोई यह नहीं कह सकता कि वह एक धनी महाजन की पालिता कन्या है। वह बिल्कुल गीशा जान पड़ती है। उसके व्यवहार में ज़रा भी हिचक या लज्जा नहीं प्रकट होती थी। उसके मुख पर वेदना की छाया तक न थी। उस आदमी के लिये भी शायद वह दुखी नहीं है, जिसको उसने अपना प्राण और शरीर, दोनों अर्पण कर दिया था। वह इतनी शराब पीती थी कि दूसरी गीशा-ललनाएँ भय से सिहर उठती थीं। शायद वह शराब पीकर अपने को और अपनी छिपी हुई वेदना को भुला देना चाहती है।"

"शिनसुको सान, तुम्हें जाकर वहाँ देखना उचित है। मैं 'ओबनाया' चाय-घर में तुम्हारा परिचय दे आया हूँ, वे लोग तुम्हारी रक्षा उसी प्रकार करेंगे, जिस प्रकार मैं करता हूँ। तुम वहाँ निरापद् रहोगे।"

किंजो की बातों ने शिनसुको के हृदय में तूफ़ान पैदा कर दिया। सूया गोशा हो गई, और तोकूबी की उपपत्नी है। नहीं, यह असंभव है। वह चाहे गोशा हो जाय, चाहे जितनी शराब पिए, चाहे जितनी विलासिनी हो जाय, किंतु अगर उसके प्रति उसका प्रेम वैसा ही है, तो वह प्रसन्न है। उसे और कुछ न चाहिए, केवल सूया उसे भूले नहीं।

दूसरे ही दिन शिनसुको ने अपने बाल बनवाए, और बनावटी मसे भी साफ़ कर डाले। पहले की तरह नए और साफ़ कपड़े पहने। पहले की भाँति शौर्य और विश्वास उसकी आँखों से टपकने लगा। उसका मलिन मुख उत्फुल्ल होकर खिल गया। लेकिन अब भी उसके मानस-मंदिर में पाप की बेसुरी रागिनी बजकर उसे कँपा देती थी। सीजी की ओर से वह निर्भय था, यदि सीजी उसे देख भी लेगा, तो उस पर वार न करेगा। किंतु तब भी किंजो ने उसे पालकी पर जाने के लिये मजबूर किया, और दिन में किसी तरह भी जाने न दिया। शाम को ही जाना निश्चित रहा।

धीरे-धीरे संध्या की मलिनता आकाश में फैलने लगी। शिनसुको उत्सुकता से घर के बाहर निकला। वह सोभोकोची

से मिलने जा रहा था या उससे विदा लेने! लेकिन यह विदा तो संसार से बिदा थी। जाने के पहले शिनसुकी ने किंजो का पंजा सप्रेम पकड़ते हुए, भर्राए हुए स्वर में, कहा—"अच्छा, अब मुझे बिदा दो।"

कहते-कहते उसकी आँखों में पानी भर आया।

किंजो ने सप्रेम उसका हाथ पकड़ते हुए कहा—"ठीक है, शायद हमारी और तुम्हारी यही अंतिम भेट है। अगर सोभी-कोची हो तुम्हारी सूया-चान निकले, तो तुम यहाँ आने का कष्ट न करना, सीधे थाने चले जाना। मैं जानता हूँ, तुम्हारे लिये यह काम बड़ा ही कठिन और दुस्तर होगा। किंतु यदि तुमने इस काम में एक-दो दिन की देरी की, तो तुम्हारे ये सद्वि-चार हवा हो जायँगे, और तुम्हारा मन तुम्हारे शासन से बाहर हो जायगा। अगर तुम एक ईमानदार आदमी की तरह काम करोगे, तो अपना सब भार मेरे ऊपर छोड़ दो। अपने वृद्ध माता-पिता की ओर से तुम निश्चित रहो, उन्हें किसी बात का कष्ट न होने पावेगा। मैं उनकी देख-रेख करूँगा।'

किंजो को अब शिनसुकी की ओर से विश्वास हो गया था कि उसके हाथों से शायद अब दूसरा पाप नहीं हो सकता। अब उसका चरित्र बिगड़ नहीं सकता। लेकिन उसे डर था कि सूया को देख-कर, और सूया के कहने से, शायद दोनो आत्म-हत्या न कर डालें।

उसने शिनसुकी से पूछा—"सूया-चान से मिलने पर तुम क्या कहोगे?"

शिनसुकी ने धीरता से उत्तर दिया—"मैं उससे विनय करूँगा कि वह यह नीच व्यवसाय छोड़कर अपने माता-पिता के पास चली जाय।"

किंजो ने प्रसन्न होकर कहा—"ठीक है, देखता हूँ कि तुम्हारी आत्मा की मलिनता दूर हो गई है। तुम पहले की तरह स्वच्छ, महान् और पवित्र हो गए हो, जैसा सदा से तुम्हें देखता आया हूँ।"

फिर जेब से रुपयों का एक ताड़ा निकालकर उसके सामने रखते हुए कहा—"लो, इससे सूया के लिये कोई उपहार लेते जाना।"

शिनसुकी ने इनकार करते हुए कहा—"नहीं, इसकी आवश्यकता नहीं है। मेरे पास इन चार महीनों की कमाई का धन बचा हुआ है। वही यथेष्ट है।"

किंजो ने बगैर किसी आपत्ति के रुपया जेब में रख लिया। उसे विश्वास था कि नवयुवक शिनसुकी किसी प्रकार भी उसका धन नहीं ग्रहण करेगा।

उस दिन की संध्या बड़ी ही मनोरम थी। दक्षिणी वायु गुदगुदी पैदा करती हुई बह रही थी। चंद्रदेव आकाश में अपनी सकल कलाओं से चमक रहे थे, किंतु कुहरे का हल्का आवरण उनकी ज्योति का धरातल पर आने के लिये मना कर रहा था। सड़क पर जाते हुए स्त्री-पुरुषों के मुख पर उमंग, हर्ष और उत्साह छाए हुए थे, जिन्हें वे चंपा-पुष्प की तरह बिखेरते

हुए चले जा रहे थे। शिनसुकी की पालकी 'ताकाबाशी' होती हुई 'कुरेयोची' की ओर घूमी। बाईं ओर हाथीमार के देव-मंदिर का पहला फाटक था, और सामने ही ओबनाया का चाय-घर था। इस चाय-घर से वह भली भाँति परिचित था, किंतु जाने का कभी उसे सौभाग्य प्राप्त न हुआ था। हर्ष और उत्तेजना से काँपता हुआ वह चाय-घर के फाटक पर पहुँचा। द्वारपाल से कहा कि "मुझे 'नारीहीराचो' के स्वामी ने भेजा है।" शिनसुकी के यह कहते ही सब मार्ग उसके लिये खुल गए, जैसे संकेत-शब्द कहने से पथावरोध उन्मुक्त हो जाता है, और अबाध मार्ग मिल जाता है। चाय-घर के परिचारकों ने चिल्लाकर कहा—'नारीहीराचो' के स्वामी के भेजे हुए सज्जन आए हैं। वे लोग ससम्मान उसे एक अच्छे सजे हुए बड़े कमरे में ले गए। यह कमरा घर के पिछले भाग में पड़ता था, और उसका एक द्वार बाग़ में खुलता था। मनोहर दीप-प्रकाश उस कमरे की सुंदरता को द्विगुणित कर रहा था। किसी को स्वप्न में भी विश्वास न हो सकता था कि ऐसे नाद-पूर्ण चाय-घर में ऐसा शांत कमरा भी हो सकता है।

उस कमरे में पहुँचकर उसने उस परिचारक से, जो उसे भेजने आया था, कहा—"मैं सोभीकीची गीशा से मिलना चाहता हूँ। किसी दूसरी गीशा की आवश्यकता नहीं है।"

उसने इतनी गंभीरता से कहा था, जो दूसरी गीशा-वारां-गंनाओं के प्रति व्यंग्य जान पड़ता था। उसके कथन से यह

जान पड़ता था कि वह कोई शहर का ही रहनेवाला नवयुवक है, जिसे अपने सौंदर्य पर विश्वास है। और जो अपने मन-मोहनरूप से सजकर उस मरदानी सुंदरी को वशीभूत करने के लिये जान-बूझकर सादे वेश में आया है, जो उसकी कहानी में और अधिक रोचकता डाल देगा।

शिनसुकी उसी कमरे में बैठा हुआ सोभीकोची की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे एक-एक मिनट वर्ष के समान बीत रहा था। उस कमरे का पिछला दरवाज़ा खुला और सोभीकीची ने उस कमरे में प्रवेश किया। उसने एक ही दृष्टि में पहचान लिया कि सोभीकीची उसकी सूया के अतिरिक्त अन्य रमणी नहीं है। वह उस दिन रेशमी कुरते पर नीले रंग का वस्त्र पहने हुए थी, और जड़ाऊ लहँगे-जैसा साटन का वस्त्र उसकी मनोहर कमर से बँधा हुआ था। उसके कपड़ों में झालर और बेल टँकी हुई थी, जो उसके रूप को और बढ़ा रही थी। जब वह चलती थी, तो उसके पैरों से लगकर उसका जड़ाऊ ज़रीदार वस्त्र बिखर जाता, और मनोहर रेशमी साया देखनेवालों के दिलों पर बिजली गिराता था।

शिनसुकी की पीठ देखते ही सूया चौंकी, और शीघ्रता से सामने आ उसे पहचानकर हर्ष से चिल्ला उठी। दूसरे ही क्षण हर्षावेग से उसके मुख का रंग चढ़ने-उतरने लगा, और वह निश्चेत-सी होकर उसकी गोद में गिर पड़ी।

उसने सप्रेम उसके घुटनों को अपने हाथ से दबाते हुए

कहा—"आह ! तुमको पाकर आज मैं कितनी प्रसन्न हूँ ! मैं कैसे तुम्हें बताऊँ कि मैं तुम्हारे देखने के लिये कितनी आकुल थी, तुमसे मिलने के लिये कितनी लालायित थी।"

हर्षावेग से वह बार-बार उसका पैर दबा देती थी।

और शिनसुकी, शिनसुकी सोच रहा था कि हाय, कल ही तो उसे अपनी सूया और संसार छोड़ देना पड़ेगा। धीरे-धीरे उसके मन में जीवित रहने की इच्छा बलवती हो रही थी, और वह अपनी दृढ़ प्रतिज्ञा एवं अपने सुविचारों से फिसल रहा था।

पौष-मास के उस कुदिन की स्मृति दोनों के मानस-पट पर ताजी थी। दोनों एक दूसरे पर बीती सुनाना चाहते थे। शिनसुकी ने सूया को ही कहने के लिये मजबूर किया।

सूया अपनी कहानी कहने लगी—"तुम्हारे जाने के बाद, मैं खिड़की से तुम्हारी नाव और तुम्हें देखने लगी। मैं देख ही रही थी कि सीजी की स्त्री ने आकर कहा—'मैंने आज एक जरूरत से सब नौकर बाहर भेज दिए हैं, क्योंकि आज रात को यहाँ उनकी ज्यादा आवश्यकता न थी।' यह कहकर वह मेरे पास बैठकर मुझसे बातें करने लगी, और थोड़ी ही देर में मूसलाधार पानी बरसने लगा। पानी कई घंटे तक बरसता रहा, किसी तरह बंद ही न होता था, मैं तुम्हारे लिये घबरा रही थी। दो-तीन घंटे रात गए सीजी शराब में झूमता हुआ, अपने दो-तीन साथियों-सहित, जिन्हें मैंने कभी नहीं देखा था, आया। सीजी ने उन अपरि-

चित व्यक्तियों से मेरी ओर संकेत किया, और उन लोगों ने बिना कुछ कहे-सुने मुझे बाँधना शुरू कर दिया, और बाहर लाकर उसी असहाय दशा में एक पालकी में डाल दिया। थोड़ी देर में वे लोग उसी पालकी पर मुझे सुनायारा में तोकूबी के घर ले आए। शायद पहले से ही सब ठीक ठाक था, दिन, समय, घड़ी सब नियत था, क्योंकि तोकूबी छः-सात बदमाशों के साथ मेरी अभ्यर्थना के लिये तैयार था। मुझे पालकी से निकालकर उन्हीं बदमाशों के बीच में बिठा दिया गया, जो मुझे देखकर हँसते, मेरी हँसी उड़ाते और शराब पीते थे। मैं अपने जीवन से बिल्कुल निश्चिंत थी, क्योंकि मुझे विश्वास था कि वे मुझ पर आसक्त हैं, और किसी तरह भी मुझे कष्ट न देंगे, और न मेरी जान ही लेंगे। अधिक-से-अधिक वे मुझे किसी के हाथ बेच सकते थे, इससे अधिक वे कुछ न कर सकते थे। और न वे मेरा रूप कुरूप कर सकते थे, क्योंकि उन्हें मेरी बदौलत गहरी रक़म मिलने की आशा थी। यही सब सोचकर मैंने अपना हृदय मज़बूत किया, और घटना-चक्र से लड़ने के लिये तैयार हो गई। उन लोगों ने कई बार जान लेने की धमकी दी, लेकिन मैंने ज़रा भी ध्यान न दिया, और सदैव उनकी प्रार्थना ठुकराती रही। यदि किसी की चिंता थी, तो तुम्हारी! मैं रात-दिन तुम्हारे ही संबंध में सोचा करती थी।"

"दो ही दिनों में मेरा अनुमान ठीक निकला। सीजी मुझ पर आसक्त था, और इस तरह मुझे तुमसे अलग करके अपनी

पाप-वासना पूरी करना चाहता था। उसने मुझे एक कमरे में क़ैद करवा दिया, और रोज़ शाम को मुझे फुसलाने के लिये आया करता था।"

"एक दिन उसने कहा कि वह बहुत दिनों से मुझ पर आसक्त है, और उसका दाँत मुझ पर बहुत काल से लगा है, लेकिन किसी तरह कोई उपाय उसे अपनी अभिलाषा पूर्ण करने का नहीं सूझ पड़ता था। वह मेरा और तुम्हारा प्रेम जानता था, इसीलिये वह मेरे दिल में घर से भाग जाने की इच्छा पैदा करने का अवसर ढूँढने लगा। उस दिन अवसर पाकर उसने तुमसे और मुझसे भागकर उसी के यहाँ आश्रय लेने को कहा था। यह सब उसका चाल और कौशल था। वह किसी तरह मुझे अपने वश में करना चाहता था। वह रोज़ यही कहता कि जो कुछ बदमाशी या दुष्टता उसने की है, वह मेरे हो पाने के लिये। और, मैं क्षमा करके उसके सब अपराध भूलकर उसकी उपपत्नी बन जाऊँ।"

"जब-जब मैं तुम्हारे बारे में पूछती, वह कभी ठीक-ठीक उत्तर न देता। कभी कहता कि तुम्हें मैं भूल जाऊँ, और कभी कहता कि तुम्हारे पिता तुम्हें पकड़ ले गए हैं, और अब तुम्हारा आना असंभव है। इसी तरह कभी कुछ कहता, कभी कुछ। पर मेरे मन में उसकी एक भी बात न बैठती थी। उससे यह भी मालूम हुआ कि वह कभी मेरे पिता के यहाँ नहीं गया, उस समय जो वह कहता था, सब झूठ था, और केवल हम लोगों

को बहलाने के लिये कहता था। कभी-कभी उसकी बातों से मुझे शक होता था कि उसने तुम्हें मार डाला है, और मैं तुम्हें सदा के लिये खो बैठी हूँ।"

"मैं उसकी बात न मानती, और वह मुझे छोड़ता न था। दो महीने तक मैं उसी कोठरी में सड़ती रही। जैसे सीजो मेरे पीछे पड़ा हुआ था, वैसी ही मैं भी अपने वचन की पक्की थी। भय, धमकी, लालच, घुड़की, किसी तरह भी मैं उसके क़ाबू में न आई। अंत में तोकूबी को बीच में पड़ना पड़ा। उसने सीजो को समझाया कि इस तरह से तो वह कभी भी मुझ पर विजय नहीं पा सकता। न-मालूम दोनो ने क्या सलाह की, पर उसी दिन से मेरे साथ व्यवहार अच्छा होने लगा। मेरी ख़ुशामद की जाने लगी, मेरे आराम का प्रबंध किया गया, और उस काल-कोठरी से भी छुटकारा मिला। पर अब भी मुझ पर काफ़ी चौकसी रक्खी जाती थी। घर से बाहर जाने की मनाही थी, और वैसा ही प्रबंध भी किया गया। लेकिन यह जीवन पहले जीवन की अपेक्षा और कष्टप्रद था। सीजो के शब्द मुझे बाण से भी अधिक पीड़ा पहुँचाते थे।"

"तोकूबी सीजो का ही समवयस्क है, लेकिन उससे अधिक चालाक और बुद्धिमान् है। कोई नहीं कह सकता कि उसके दिल में क्या है। अपनी बातों से तो वह बड़ा ही भला आदमी जान पड़ता है। ऐसा मालूम होता है, मानो बड़ा ही दयावान्

और सच्चरित्र व्यक्ति है। वह अब मध्यस्थ होकर सोजी और मेरे बीच में बातें करने लगा। वह मेरे प्रति दुःख और सहानुभूति प्रकट करके अपनी दया दर्शाता था। उसकी बातों से मुझे यह भ मालूम हुआ कि यह भी मेरे प्रेम-जाल में फँसा है। सीजी से बचने के लिये तोकूबी से बढ़कर सहायक दूसरा उस जगह न था। मैं भी कभी अपने भावों से बता देती कि मैं भी उस पर मुग्ध हूँ, और उससे प्रेम करती हूँ। यह ढोंग इसलिये करना पड़ा कि मेरे ऊपर उसका विश्वास हो जाय, और मैं स्वतंत्र हो जाऊँ। मैं सुनादारा से भागकर तुम्हें ढूँढ़ने के लिये न-मालूम कितनी व्याकुल थी।"

'एक दिन जब वह शराब पी रहा था, मैं भी उसके पास बैठी हुई थी। मैंने उसको नशे में देखकर कहा कि 'मैं तो शिनसुकी की ओर से निराश हो गई हूँ। उसका बिल्कुल आसरा छोड़ बैठी हूँ।' इस पर तोकूबी ने वे सब बातें बतलाईं, जो अभी तक मुझसे छिपाई गई थीं कि किस तरह सांता ने तुम्हें नदी के किनारे मार डाला, और वही सांता न-मालूम क्यों सीजी की स्त्री की हत्या करके उसका रुपया-पैसा लेकर भाग गया है। सीजी ने अब तीसरी स्त्री बिठाल ली है। यद्यपि तोकूबी की बात पर मेरा विश्वास न होता था, लेकिन घटना-चक्र सब मिल रहा था। यह सुनकर मैं तुम्हारी ओर से तो अब बिल्कुल निराश हो गई, जो कुछ थोड़ी-बहुत आशा बची भी थी, वह अब जाती रही। उसी दिन से मेरे हृदय में

प्रतिहिंसाग्नि धधकने लगी। मैंने उसी दिन शाम को प्रतिज्ञा की कि मैं किसी-न-किसी तरह ज़रूर तुम्हारी हत्या का बदला उस दुष्ट सीजी से लूँगी। इसी आशा से अभी तक ज़िंदा भी हूँ!"

"इस घटना के थोड़े ही दिन बाद तोकूबी ने सीजी से कहा कि 'वह इसी तरह जन्म-भर सूया-चान की तरफ़ से निराश रहेगा। वह कभी भी सूया-चान पर विजय न पा सकेगा, और इसी तरह उसकी अमूल्य वयस नष्ट होती जायगी, और वह सूया-जैसे अमूल्य रत्न को हाथ से खो भी नहीं सकता। सूया-जैसी सुंदरी को विवाह के कीच में फँसाना बेवक़ूफ़ी नहीं तो क्या है? अतः मुझसे तुम रुपया लेकर उसे स्वतंत्र कर दो। मैं सूया को गीशा बनाकर रुपया पैदा करूँगा। नाकाचोंवाले घर में उसे बिठाकर उसे गीशा बनाकर अच्छी रक़म पैदा करूँगा।' सीजी पहले तो किसी तरह भी उसके प्रस्ताव पर राजी न हुआ, लेकिन बहुत कुछ समझाने और लालच देने से वह राजी हो गया, और मैं उसके जाल से मुक्त हो गई।"

"एक दिन उसने मेरे पास आकर कहा—देखो, अगर तुम कुमारी होतीं, तो बात दूसरी थी।.........पर मैं और कुछ न कहकर तुमसे गीशा होने की प्रार्थना करता हूँ। क्या तुम मेरी प्रार्थना पर ध्यान दोगी।"

"तोकूबी की बात मैं इनकार न कर सकी। मेरी मुक्ति का यही उपाय था। अगर मैं इनकार करती, तो वे लोग मुझे किसी

बूढ़े के हाथ बेच देते, जहाँ से निकलना मुश्किल हो जाता। तोकूबो ही ने मेरी रक्षा की थी, इसके अतिरिक्त गीशा होकर मैं अपना स्त्री-धर्म भली भाँति निभा सकती थी। घटना-चक्र ने मुझे इस तरह चारों ओर से जकड़ लिया था कि मेरे लिये उसके सिवा दूसरा कोई पथ ही न था। मैंने सोचा था कि मेरी इस असहाय दशा को देखकर और मेरी अनिच्छा जानकर तुम परलोक में भी रुष्ट न होगे। फिर जब मुझे अलग अकेले जीवन व्यतीत करना था, तब जीविका के लिये कुछ स्वतंत्र व्यवसाय भी तो चाहिए। मेरे लिये इससे बढ़कर दूसरा उपाय न था। शायद भाग्य-विधाता ने मुझे गीशा हो होने के लिये संसार में भेजा था।"

"मैं भी अपने भाग्य पर विश्वास करके गीशा होने के लिये तैयार हो गई। किंतु कुछ अपनी शर्तों पर। तोकूबी ने भी मेरी शर्तें मान लीं। मैंने भी अपनी स्वीकृति दे दी।"

"गीशा होते ही मेरी ख्याति चारों ओर फैल गई। मेरा व्यवसाय धड़ाके के साथ चल निकला। मेरा भाग्य-तारा चम-कने लगा। मेरी गणना प्रथम श्रेणी की गीशा-वारांगनाओं में होने लगी। तोकूबी ने भी जो कुछ रुपया मुझे मेरे व्यवसाय के लिये दिया था, थोड़े ही दिन में मैंने सब अदा कर दिया। अब मैं बिल्कुल स्वतंत्र हूँ। इसमें संदेह नहीं कि मैं तोकूबी की कृपा से दबी हूँ, लेकिन फिर भी स्वतंत्र हूँ। इस समय मैं एक मकान और चार-पाँच गीशा की स्वामिनी हूँ। स्वतंत्र होकर

मैंने तुम्हारी खोज में फिर आदमी भेजे, क्योंकि अभी तक मेरे हृदय में बार-बार कोई कहता कि तुम अब भी जीवित हो। लेकिन मेरा सब यत्न विफल हो गया और तोकूबी के ही कथन को पुष्टि हुई। जब मैं चारो ओर से निराश हो गई, तो यही व्यवसाय मेरा अवलंब हो गया। जब भाग्य में ही गीशा होना लिखा था, तो मैंने भी सब कुछ इस पर न्योछावर कर दिया। आजकल बड़े सुख से दिन व्यतीत करती हूँ, और अपनी स्वेच्छा से जो चाहे करती हूँ, कोई रोकनेवाला नहीं है। मुझे माफ़ करना, अगर मैं कहूँ कि जो आनंद और ऐश्वर्य इस व्यवसाय में मिलता है, वह किसी तरह दूसरे उपाय से नहीं मिल सकता। मेरा दृढ़ विश्वास हो गया है कि गीशा-जीवन से बढ़कर दूसरा अन्य जीवन नहीं है। अभी तक एक कमी जो इस जीवन में अनुभव करती थी, वह आज तुम्हें पाकर पूरी हो गई है। मैं आज प्रसन्नता की चरमसीमा पर प्रतिष्ठित हूँ। आज से तुम्हें भी, अपनी तरह प्रसन्न करना, मेरे जीवन का कार्य होगा।"

अपनी कहानी कहते-कहते, सूया ने कई बार शराब ढालकर अपना गला सींचा था। उसकी आँखें इस समय ऐसी लाल थीं मानो ख़ून टपकने ही वाला है। कहानी समाप्त करके उसने अपना ख़ाली प्याला बढ़ाते हुए कहा—"प्यारे, अपने हाथ से यह प्याला भर दो। उफ़! बहुत दिनों से तुमने अपने हाथ की शराब नहीं पिलाई।"

शिनसुको ने करुण स्वर में कहा—"सू-चान, मैं इतना नीच

हो गया हूँ कि तुम्हारे साथ रहने के योग्य नहीं हूँ। मेरी भी कहानी सुनो। सुनकर तुम्हें मालूम होगा कि मैं कितना नीच हो गया हूँ। मनुष्य से पशु हो गया हूँ या उससे भी अधम।"

शिनसुकी आहिस्ता-आहिस्ता उससे दूर हट रहा था, और सूया आवेश में भरी हुई उसकी ओर खिसक रही थी। एक-एक करके शिनसुकी ने सब घटनाएँ उससे कहीं।

अपनी कहानी समाप्त करके उसने कहा—"अब तो तुम सब हाल जान गईं। कल सुबह मैं अपने को पकड़वा दूँगा, और न्यायानुसार दंड ग्रहण करूँगा। किज़ो को मेरा रोम-रोम कृतज्ञ है। उसने मेरी तन-मन से रक्षा की है। मैं उसके प्रति विश्वासघात न करूँगा। अब तक न-मालूम कब का मर गया होता, लेकिन मरने के पहले मैं तुम्हें एक बार देखना चाहता था। मेरी अभिलाषा पूर्ण हो गई। तुम्हें देख लिया, अब देर न करूँगा। सू-चान, मेरे सब अपराध क्षमा करना। मैं तुमसे बिदा लेने आया हूँ।"

कहते-कहते शिनसुकी व्याकुल होकर ज़मीन पर गिर पड़ा।

सया ने कहा—"अगर तुम मरोगे, तो मैं भी जीवित नहीं रहूँगी। लेकिन तुम इतना व्याकुल क्यों होते हो?"

सूया और कुछ न कह सकी। वह आवेश में भरी हुई शिन-सुकी से लिपटकर बोली—"तुम्हारे सब अपराधों की जड़ तो मैं हूँ। वास्तव में अपराधिनी मैं हूँ। मेरे ही लिये तो तुमने सब अपराध किया है। लेकिन जितना मैं सोचती हूँ, उतना ही

मुझे विश्वास होता है कि उन दोनों का मरण सर्वथा उचित था। सांता की हत्या तो तुमने प्राण-रक्षा के उद्योग में की है, और सीजी की स्त्री की हत्या तुमने प्रतिशोध लेने में की है। मुझे तो इसमें ज़रा-सा पाप नहीं दिखलाई देता। जो कुछ तुमने किया है, मैं बहुत प्रसन्न हूँ। अच्छा, शिनडान, अगर तुम अपने को न पकड़वाओ, तो क्या 'नारोहीराचो' का बुड्ढा किंजो तुम्हारे विरुद्ध होकर तुम्हें पकड़वा देगा? मुझे तो विश्वास नहीं होता। उसके अतिरिक्त तुम्हारा भेद तो कोई जानता नहीं। आजकल बहुत ईमानदारी का नाम बेवक़ूफ़ी है।"

शिनसुकी आश्चर्य से सूया का मुँह देखने लगा। थोड़ी देर बाद कुछ सोचकर बोला—"आज मैं तुम्हारे मुख से कैसी बातें सुन रहा हूँ। मैं अपने को पकड़वाए बिना कभी अपने को क्षमा नहीं कर सकता। यदि अपराध किया है, तो उसका दंड भी मुझे भोगना चाहिए। सूचान, मैं तुमसे एक भीख माँगता हूँ, दोगी। मेरी अंतिम प्रार्थना है कि जितनी जल्दी हो सके, इस व्यवसाय और इस जीवन को छोड़कर अपने माता-पिता के पास चली जाओ। जब से तुम आई हो, तब से तुम्हारे पिता बीमार हैं। परसाल से अभी तक अच्छे नहीं हुए। शायद तुम्हें इस बात की ख़बर ही न होगी। वे तुम्हारे सब अपराधों पर परदा डाल देंगे, और तुम्हें पाकर वे बहुत प्रसन्न होंगे। अगर तोकूबी का कुछ ऋण रह गया है, तो वे पाई-पाई अदा कर देंगे।"

सूया ने क्रोध से मुँह फिराकर कहा—"बस रहने दो। मैं यह बात कभी नहीं कर सकती। अभी जैसा कह चुकी हूँ, मेरे भाग्य में गीशा होना लिखा था, मैं हो गई, अब मैं इसको नहीं छोड़ सकती। मैं गीशा ही रहूँगी। किसी भले घर की विवाहिता पत्नी होने का सुख-स्वप्न मैं नहीं देख सकती। अगर तुम्हारा जरा-सा भी प्रेम मेरे ऊपर है, तो मुझे इसी प्रकार जीवन व्यतीत करने दो।"

शिनसुकी ने कहा—"अभी तक तुम्हारी ज़िद गई नहीं। तुम्हारा कैसा हृदय है, जो एक मरते हुए आदमी की प्रार्थना पर ध्यान नहीं देतीं। तुम्हारा जैसा सड़ा हुआ और कठिन हृदय तो मैंने आज तक नहीं देखा। तुम्हें यह भी नहीं मालूम कि पितृ-प्रेम कैसा होता है। गीशा का अपवित्र जीवन व्यतीत करते-करते तुम इतनी पतित हो गई हो।"

सूया ने सक्रोध कहा—"हाँ, मेरा हृदय सड़ा हुआ है, रहने दो। कृपा करके अब कुछ और मेरे मा-बाप के संबंध में न कहो।"

यह कहकर वह तमक कर उठी, किंतु आवेश से उसके हाथ-पैर शिथिल हो गए थे। वह फिर शिनसुकी के ऊपर गिर पड़ी, और उसके वक्षस्थल में अपना मुँह छिपाकर रोने लगी। शिन-सुकी की छाती भीगने लगी।

सूया ने रोते हुए कहा—"अगर इसी तरह लड़ना-झगड़ना था, तो मेरे यहाँ क्यों आए? इतने दिनों के बाद तो मिले, लेकिन फिर वही लड़ना-झगड़ना। तुम-के-तुम दुखी होते हो, और

मुझे भी आठ आँसू रुलाते हो। शिनडान, तुम वह बात न कहो, मैं उसे नहीं कर सकती। अच्छा क्या कहते हो—तुम्हारी अंतिम प्रार्थना क्या है ? मैं मानूँगी, लेकिन तुमको नहीं जाने दूँगी। अगर तुम मरना चाहते हो, तो मैं मरने नहीं दूँगी। अगर कुछ दिनों बाद यही बात कहोगे, तो फिर देखा जायगा, लेकिन आज शाम को, इतने दिनों बाद, मुझे मिले हो, और कल ही जाकर तुम अपने को पकड़वा दोगे, यह बिल्कुल असंभव है। मैं तुम्हें किसी तरह भी नहीं छोड़ सकती। आह, जाओ ! तुम बड़े निष्ठुर हो !"

सूया अपनी ही बात पर अड़ी थी। सब समझाना-बुझाना निष्फल हुआ। शिनसुकी के सब तर्क-वितर्क विफल हो गए। सूया एक बात भी नहीं सुनती। सूया की ज़िद देखकर शिन-सुकी की प्रतिज्ञा भी शिथिल हो रही थी, लेकिन वह अपनी बात पर अड़ा हुआ था। अंत में सूया ने उठते हुए कहा—"अच्छा, मैं अब तुम्हें बहुत दबाऊँगी नहीं। आओ, हम लोग फिर मित्र हो जायँ। अच्छा, मेरे साथ सिर्फ़ दो-तीन दिन रहो। इसके बाद जो कुछ तुम्हारे मन में आवे, करना। मैं तुम्हें रोकूँगी नहीं।"

सूया कभी रोकर, कभी हँसकर, कभी मनाकर, बार-बार शिनसुकी से दो दिन ठहर जाने की प्रार्थना करने लगी।

शिनसुकी भी अब अपने को सँभाल न सका। उसकी लोहे-जैसी कठिन प्रतिज्ञा बात-की-बात में मोम होकर बह गई।

सूया के संसर्ग की आशा बलवती हो उठी, और उसी आवेश में वह सब कुछ भूल गया। उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही थी, उसे शांत करने के लिये उसने कहा—"सूया को दुखी छोड़कर मुझसे मरा भी तो नहीं जायगा।"

शिनसुकी ने अपनी सम्मति दे दी। सूया प्रसन्न होकर उठ बैठी, और कहा—"हम लोग यहाँ बैठकर निश्चिंतता से बातें नहीं कर सकते। आओ, हम लोग घर चलें। मेरा घर यहाँ से बहुत ही निकट है। वहीं हम लोग आनंद से बातें करेंगे।"

सूया की ही जीत रही। इस समय उसकी प्रसन्नता का ओर-छोर न था। वह उठकर खड़ी हो गई। उसने मलिन शिनसुकी को भी हाथ पकड़कर उठाया, और उसे साथ लेकर कमरे के बाहर हो गई।

लोगों की दृष्टि से बचने के लिये दोनो अलग-अलग 'ओबनाया' चाय-घर से बाहर निकले।

किंतु थोड़ी ही देर बाद फिर मिल गए। चाँद की पीली चाँदनी में दोनो अपने-अपने विषय में सोचते हुए चले जा रहे थे। बार-बार उन्हें उस दिन की याद आती, जिस दिन वे दोनो सुरुगाया से भागे थे। उसमें और इसमें कितना अंतर है। 'ओबनाया' चाय-घर के सामने एक बाग़ था, और उसके पास से एक नहर बह रही थी। उसी नहर के किनारे इटायजी का बुद्ध-देव का मंदिर था। उस मंदिर के सामने एक दूसरा बाग़ था,

उसमें एक छोटी, किंतु भव्य अट्टालिका थी, जिसमें एक बड़ा-सा फाटक लगा था, और फाटक के ऊपर लिखा था—"सूटाया", जो एक बड़ी लालटेन के तेज प्रकाश से चमकता हुआ पथिकों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा था। यही सूया का घर था। घर यद्यपि बहुत बड़ा न था, लेकिन फिर भी इतना बड़ा था कि उसमें दो-तीन नौकर और चार-पाँच गीशा भली भाँति रहती थीं। चारो ओर लकड़ी का काम किया हुआ था। फ़र्श पर क़ालीन बिछे हुए थे। घर बाहर और भीतर से साफ़ और सुंदर था।

घर की स्वामिनी को आते देखकर एक १५-१६ वर्ष की बालिका उनका स्वागत करने के लिये बाहर निकल आई। सूया ने उसे बुलाकर कान में कुछ कहा, और वह तुरंत ही घर के भीतर जाकर अपने कपड़े बदलकर फिर अपनी स्वामिनी के पास आ गई।

सुरुगाया में जब दोनो रहते थे, तब स्वतंत्रता-पूर्वक प्रेमालाप नहीं कर सकते थे। कभी-कभी मौक़ा लगाकर जल्दी में एक-आध शब्द कहकर दोनो अपने-अपने हृदय की तपन बुझा लिया करते थे। सीजी के घर में वे स्वतंत्र अवश्य थे, लेकिन सीजी जहाँ उन्हें बैठा देखता, एक-न-एक बात कहकर उन्हें खिन्न कर देता था। लेकिन वे दिन भी इतनी जल्दी और घबराहट में बीत गए कि दोनो की अभिलाषाएँ अब भी अतृप्त और भूखी थीं—उनकी लालसा अभी तक बुझी न थी। अब पूर्व-

प्रेम की एक-एक घटना उन दोनो को याद आने लगी, और अपनी-अपनी व्यथा कहकर अपना जी हल्का करने लगे।

सूया ने कहा—"क्यों तुम्हें याद पड़ता है, जब सीजी के घर में मैं गीशा-वेष से रहती थी, और कभी-कभी उन्हीं की भाषा का एक-आध शब्द मेरेमुँह से निकल पड़ता था, तब तुम मुझ पर बहुत नाराज होते थे। अब कहो, इस समय तो मैं पूरी गीशा ही हूँ, अब अगर उनकी भाषा में उन्हीं की तरह बात करूँ, तो क्या अब भी तुम बुरा मानोगे, और मुझ पर नाराज होगे।"

सूया धड़ाके से उन्हीं की भाषा में बातें करने लगी। शिन-सुकी बार-बार उसे 'सू-चान' कहकर पुकारता था। सूया के कानों को वह शब्द बुरा लगता था।

उसने कहा—"तुम मुझे 'सू-चान' कहकर न पुकारा करो। यह आदर मुझे न चाहिए। तुम मुझे 'ओ-सूया' कहकर पुकारा करो, और मैं भी तुम्हें 'शिनडान' न कहकर 'शिनसान' कहा करूँगी, जैसा पति को पुकारना उचित है। ❀

शिनसुकी बहुत शराब पी चुका था, अब पीने की इच्छा न थी। सूया भला कब माननेवाली थो। अपने मुँह में शराब भरकर जबरदस्ती उसके मुँह में छोड़ने लगी। शिनसुकी इन-

---

❀ जापान में यह रीति है कि पुरुष तो स्त्री का नाम लेकर पुकारता है, कोई आदर-सूचक शब्द नाम में नहीं लगाता, किंतु स्त्री जब अपने पति का नाम लेती है, तो कोई-न-कोई आदर-सूचक शब्द लगाती है।

कार न कर सका, वह सहर्ष पीने लगा। शिनसुकी भी कम शराब पीनेवाला न था, लेकिन इस 'साकी' ❀ में इतना प्रबल नशा था, जो उसे घुमाए दे रहा था। उसे ऐसा मालूम हो रहा था कि साकी उसके गले के नीचे जाकर उसकी एक-एक नस ढीली किए दे रही है।

केवल तीन दिन—तीन छोटे-छोटे दिन—फिर उनके प्रेमाभिनय पर यवनिका-पात! दोनो ने यही सोचकर अपने को विषय-वासना में डुबो दिया। दोनो निरंकुश होकर 'सरस राग रति-रंग' में डूबने-उतराने लगे। अपना-अपनी शिथिल इंद्रियों को साकी का एक गिलास पीकर फिर उत्तेजित करते, और फिर विलास-सागर में डुबकियाँ लगाने लगते।

सुबह से शाम तक वे अपने सामने साकी की बोतल और होटल का सुंदर भोजन लिए हुए बैठे रहते। न नींद आती थी, और न वे सोने के लिये लालायित हो थे। रात-दिन लालसा और विलास के दो खिलौने आनंद में अपने गिने हुए दिन काट रहे थे। तीसरे दिन अहर्निश काम-क्रीड़ा और साकी की उष्णता से उनका सिर चकराने लगा। जब कभी वियोग का विचार आ जाता, तो उनका सारा आनंद काफ़ूर हो जाता। अब उनके जीवन का सबसे सुखमय काल वह था, जब शिनसुकी 'ओबनाया' चाय-घर में सूया से मिला था।

❀ 'साकी' एक प्रकार की मदिरा का नाम है, जो चावलों से बनती है। जापानी इसे बड़े प्रेम से पीते हैं।

तीसरे दिन प्रभात-बेला में शिनसुकी ने कहा—"तुम मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो। मुझे रह-रहकर शक होता है कि तुम मुझे उतना नहीं प्यार करतीं, जितना पहले करती थीं। तुम्हारा प्रेम तोकूबी पर है। वह सम्मानित, रुपए-पैसेवाला अमीर आदमी है, मुझसे कहीं श्रेष्ठ है। उसमें और मुझमें आकाश-पाताल का अंतर है। जितना ही जल्दी मैं चला जाऊँ, उतना ही तुम दोनो के लिये अच्छा है। क्यों?"

शिनसुकी की बात सुनकर सूया ने झिड़ककर कहा—"मुझे तुम्हारी इन ईर्षा-भरी बातों की तनिक भी परवाह नहीं है। मैं नहीं जानती, तुम मेरे बारे में क्या सोच रहे हो? लेकिन मैं इतना जानती हूँ कि आज तक तुम्हारे सिवा कोई भी मेरे शरीर या हृदय का अधिकारी न हो सका है, और न होगा।"

शिनसुकी ने कहा—"फिर क्यों तोकूबी ने इतना रुपया तुम पर खर्च किया? बड़ी विचित्र बात है।"

सूया ने हँसकर कहा—"इसीलिये तो तुम्हें मेरी प्रशंसा करनी चाहिए। न मैंने किसी की जान ली, न किसी का धन चुराया, फिर भी दुष्टों को उल्लू बनाकर अपनी इज्जत बचाती हुई अपने ध्येय पर पहुँच गई। मुझे वह बात मालूम है, जिससे इन बदमाशों से अपना मतलब पूरा करके फिर इन्हें ठुकरा सकती हूँ। जब बदमाशों से पाला पड़े, तो मैं जानती हूँ कि क्या करना चाहिए, और तुम्हें दो-एक बातें सिखा भी सकती हूँ।"

शिनसुकी को विश्वास हो गया। उसका संदेह जाता रहा। सूया सत्-चरित्र है, और उसी की है।

उसने प्रेम से गद्गद होकर कहा—"मुझे माफ़ करो, मुझे माफ़ करो। तुम्हें इस दुष्ट-समाज में देखकर मुझे शक हुआ था, लेकिन अब तुम्हारे मुख से सुनकर मुझे विश्वास हो गया है। अब मैं सुख से मरूँगा।"

सूया ने सप्रेम उसका हाथ पकड़ते हुए कहा—"तुम इतने शांत और सरल प्रकृति के हो कि कभी भी अपनी ज़िद पूरी नहीं करते। इतने निरीह हो कि एक शब्द भी नहीं कहते। आज तुम्हारे मुख से इर्षान्वित शब्द सुनकर तुम्हें और अधिक प्यार करने की इच्छा होती है। तुम्हारे ये शब्द मेरे कान में पहुँचकर हृदय में गुदगुदी पैदा करते हैं। आह! तुम आज कितने सुंदर लगते हो।"

शिनसुकी की भी दृष्टि में सूया उस दिन सुंदरी-श्रेष्ठ दिखाई पड़ती थी। वह जैसी आज सुंदरी देख पड़ती थी, वैसी कभी नहीं। वह उसे प्यार करना चाहता था, और सदैव इसी भाँति। उसकी लालसा इतनी प्रबल हो गई कि उसके मुख से निकल पड़ा—"जाय, सब भाड़ में जाय।"

सूया कब चूकनेवाली थी। उसने कहा—"अच्छा शिनसान, अगर तुम थोड़े दिन और रह जाओ, तो क्या बुराई है? जहाँ इतने दिन रहे, थोड़े दिन और सही।"

सूया ने बड़ी ही लालसा और वासना-प्रदीप्त नेत्रों से शिन-

सुकी की ओर देखा, और उन्हीं के द्वारा अपनी सब अतृप्त लालसा का भार उसके हृदय में डाल दिया। शिनसुकी ने कुछ गुनगुनाकर कहा, जिसे सुनकर सूया प्रसन्न होकर उससे लिपट गई। लेकिन शिनसुकी उस समय अपने आपे में न था।

इसके पश्चात् वे ख़ुमार से अपनी रक्षा न कर सके, और वहीं पर ढुलककर सो गए।

तीसरे पहर उनकी नींद टूटी, और फिर शराब पीने में तल्लीन हो गए। अब की बार आनंद भी कम हो गया था, और उमंग भी शिथिल हो गई थी। जैसे प्रातःकाल वे सुखी थे, वैसा आनंद उन्हें न मिला। अभी तो उनके सामने सारी रात भोग-विलास के लिये पड़ी थी, किंतु दोनो यामिनी की प्रथम बेला में, अपने-अपने अंधकार-पूर्ण विभिन्न पथ के उस ओर—उस पार—देखने का यत्न कर रहे थे। वे नहीं जानते थे कि उसके बाद क्या है ? फिर नशे में चूर होकर, उस भयावह चिंता को भूल जाने में ही उन्होंने अपना कल्याण समझा। किंतु जितना ही वे मदिरा-पान करते, उतनी ही उनकी चिंता भी सजग होती। जितना ही उसे भुलाना चाहते, उतना ही वह सजग होकर उनके सारे भोग-विलास पर आग डाल रही थी।

सूया ने निस्तेज नेत्रों से शिनसुकी की ओर देखते हुए कहा—"तुम्हें प्रातःकाल की प्रतिज्ञा स्मरण है न। अभी तुम भूले न होगे।"

सूया न-मालूम किस भावी आशंका से विकल हो रही थी।

उसका कंठ भर्राया हुआ था। उसका शब्द उसके कानों को व्यंग्य होकर सुन पड़ता था।

उसने फिर बड़े ही विनीत स्वर में कहा—"अगर साल-छः महीने न सही, तो दो-तीन दिन और ठहरो। अभी मेरी आत्मा तृप्त नहीं हुई है। अभी तक तो हम लोग साकी के आवेश में थे, और अब हम लोगों को वास्तविक रूप से आनंद करना चाहिए।"

किंतु शिनसुकी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहा। सूया की प्रार्थना वह स्वीकार न कर सका। दूर—सुदूर से उसकी आत्मा उसे अपना पाप-प्रक्षालन करने के लिये आवाहन कर रही थी। वह कल अवश्य ही अपने को न्याय के कठिन हाथों में सौंप देगा। उसने बार-बार सूया से अनुनय-विनय की कि वह घर लौट जाय। किंतु दोनो अपनी ज़िद पर अटल थे, कोई किसी ओर हटना न जानता था। दोनो अपनी-अपनी चिंताओं में मग्न होकर चुप हो गए।

"उँह! अब कहने से क्या लाभ, सब फ़िज़ूल है।" कहती हुई सूया उठी, और दूसरे कमरे से अपना 'सामीसेन' ❀ लाकर शिनसुकी के सामने खिड़की के पास बैठ गई। उसने कमरे की सब खिड़कियाँ खोल दीं, और बैठकर

❀ "सामीसेन" या शामीसेन। एक प्रकार का जापानी बाजा है। जिसे गीशा प्रायः बजाती हैं। एक प्रकार से यह उन्हीं का यंत्र समझा जाता है।

'काटोबूशी' * गत बजाने लगी। उसके कलकंठ से गान के शब्द निकल-निकलकर, कमरे में शिनसुकी को मुग्ध कर, बाहर पथिकों की गति अवरोध करने लगे। सूया गीत द्वारा अपनी मनोवेदना प्रकट कर रही थी।

गान समाप्त होने पर सूया ने दर्द-भरी आँखों से शिनसुकी की ओर देखते हुए कहा—"इस गीत के शब्दों पर ध्यान दिया है? आह! क्या उनकी व्यथा तुमने नहीं अनुभव की? क्या तुम अब भी मुझे ठुकरा कर चले जाओगे?"

सूया की आँखें आँसुओं से भरी थीं। वह कनखियों से उसकी ओर देखकर उसके मन की थाह लेने का यत्न करती थी। दूर पूर्वदिशा से अंधकार अपनी जड़ाऊ काली चादर आकाश के एक सिरे से लेकर दूसरे सिरे तक फैलाता जा रहा था। ऊपर से, खिड़की की राह से, तारे भी झाँक-झाँककर सूया की मनोवेदना पर सहानुभूति प्रकट कर रहे थे।

इसी समय बाहर किसी की दबी हुई सतर्क पद-ध्वनि सुनाई दी, और किसी ने धीरे से द्वार खोलकर भीतर झाँककर देखा, और कहा—"मैं समझता हूँ कि मैं आज अपने सामने शिनसुकी सान को देख रहा हूँ। हमारा और आपका यह प्रथम साक्षात् है। मैं सुनामुराका तोकूबी हूँ। यही मेरा नाम है।"

तोकूबी ने झुककर प्रणाम किया। उसके दाहने हाथ में

---

* "काटोबूशी" यह येदो या टोकियो की ख़ास चीज़ है, जो प्रायः नाटक के पश्चात् बजाई जाती है।

तंबाकू की थैली थी, और वह पीले रेशमी वस्त्र पहने था। वह अच्छे डील-डौल और सुंदर गठन का था। शिष्टता और सौजन्य उसके मुख से टपके पड़ते थे।

शिनसुकी उत्तर में कुछ कहने ही वाला था कि सूया ने तीव्र स्वर में कहा—"आप मेहरबानी करके चुप रहेंगे। क्या आप देखते नहीं, मैं इस समय गाने में व्यस्त हूँ।"

वह बिना किसी उत्तर की अपेक्षा किए सामीसेन बजाने लगी।

तोकूबी ने बड़े ही विनम्र शब्दों में कहा—"मैं बहुत दुखी हूँ कि मैंने आपको इस अवसर पर विरक्त किया है। किंतु ऐसा ही एक जरूरी काम आ पड़ा है। नीचे आकर जरा दो मिनट बातें कर लीजिए, मैं आपका किसी प्रकार अधिक समय नष्ट नहीं करूँगा।"

कहते हुए उसने आँख दबाकर संकेत से यह भी बताया कि कोई गुप्त बात है, जिसे वह वहाँ नहीं कहना चाहता।

सूया ने उत्तर दिया—"मैं जानती हूँ, जिस लिये तुम मुझे बुला रहे हो। लेकिन मैं यहाँ से हट नहीं सकती। मैं किसी तरह भी इनको अकेले छोड़कर नीचे तुम्हारे साथ नहीं जा सकती। तुम्हें मेरा सब हाल मालूम है। बस आगे और कुछ न कहो।"

तोकूबी ने कहा—"आप भूल रही हैं। आप जो बात कह रही हैं, वह बात भी है। लेकिन इस समय शिनसुकी के संबंध की ही बात है।"

सूया ने सामीसेन अलग रखते हुए कहा—"तुम यहाँ पर

कितनी देर से खड़े हो, जो शिनसान का नाम जान गए हो ? तुमने आज के पहले इन्हें कभी नहीं देखा ; फिर कैसे इनके नाम से अवगत हो।"

तोकूबी ने मुसकिराकर कहा—"अभी-अभी, आप ही तो बार-बार शिनसान, शिनसान कहकर पुकार रही थीं, जो सीढ़ियों से साफ़ सुनाई पड़ता था। शिनसान सुनकर पूरा नाम जान लेना कुछ कठिन नहीं है।"

फिर शिनसुकी से कहा—"चारों ओर से निराश होकर फिर यकायक आपके मिल जाने से ओ-सूया का प्रसन्न होना उचित ही है। मैं भी बहुत प्रसन्न हूँ।"

सूया ने फिर तीव्रता से कहा—"ख़ैर, आप और परेशान न होइए। कहिए, क्या कहना चाहते हैं, मैं यहीं सुनूँगी।"

तोकूबी ने कहा—"अभी तो बहुत समय पड़ा है, अब तो यह कहीं आपके पास से भाग न जायँगे। नीचे चलकर ज़रा दो बात सुन लें, फिर चली आइएगा। मैं आपको दो-तीन मिनट से ज़्यादा न रोकूँगा।"

शिनसुकी दोनों का विवाद सुनकर मन-ही-मन घबरा रहा था। तोकूबी का मतलब क्या है, उसकी भी समझ में कुछ न आता था। लेकिन तोकूबी का शांत मुख देखकर उसे कुछ ढाढ़स होता था। सूया की तीव्र और जली-कटी पर भी उसके विनम्र उत्तरों ने उस पर बहुत प्रभाव डाला। शिनसुकी शांत और सरल प्रकृति का मनुष्य था। उसे सूया के साहस

पर भी आश्चर्य हो रहा था—वह तोकूबो-जैसे चतुर जुआरी-आचार्य को अपनी उँगलियों पर नचा रही थी। पहले की सूया और अब की सूया में बड़ा अंतर था—पहले की सरल आत्मा अब कठोर और चतुर हो गई थी।

शिनसुकी ने कहा—"सूचान, तुम्हारा इस तरह उत्तर देना बिल्कुल ठीक नहीं है, विशेषकर उस आदमी को जिसका अहसान तुम पर बहुत है; तुम जिसकी कृपा से उबर नहीं सकतीं। मैं यहाँ बैठा हूँ, तुम नीचे जाकर सुन आओ।"

सूया ने तुरंत ही उठते हुए कहा—"अच्छा, अगर तुम कहते हो, तो मैं जाती हूँ।"

शिनसुकी विस्मित हो रहा था कि सया ने कैसे इस सरलता से उसकी बात मान ली। सूया ने अपने बाल सँभाले, और कपड़े दुरुस्त करके शीशे में अपना मुँह देखकर शिनसुकी से कहा—"शिनसान, जब मैं चली जाऊँ, तो तुम मा के निरीह बालक की भाँति चुपचाप यहीं बैठे रहना। मुझे देर न लगेगी। मैं कभी न जाती, अगर तुम्हारे संबंध की बात न होती।"

तोकूबो ने भी जाते हुए कहा—"आप घबराएँ नहीं, कुछ विशेष बात नहीं। आप निश्चित रहें। अच्छा प्रणाम।"

यह कहकर तोकूबो नीचे चला गया और सूया भी उसके पीछे-पीछे चली गई।

शिनसुकी सोचने लगा—"क्या कोई किंज़ो के यहाँ से उसे लेने आया है! कहीं सीजी तो नहीं आया? शायद उसे मेरा

पता लग गया हो, इसलिये तोकूबी को साथ लेकर आया हो। चलते समय तोकूबो ने आश्वासन तो दिया है। लेकिन फिर भी भय क्यों नहीं छोड़ता ? अगर सोजी है, तो फिर कुछ डर की बात नहीं, क्योंकि कल तो मैं अपने को पकड़वा ही दूँगा। और अगर किंजो का आदमी है, तो मैं उसे कैसे अपना मुँह दिखाऊँगा। मैंने अभी तक अपनी प्रतिज्ञा पूरी नहीं की। मैंने कहा था कि सूया को देखकर ही मैं अपने को पकड़वा दूँगा। लेकिन कहाँ ? मैं तो यहाँ भोग-विलास में डूबा हुआ हूँ। उफ़ ! इस स्त्री में कितनी शक्ति है, मुझ पर कितना प्रभाव है। न-मालूम क्यों इसके सामने मैं अपना अस्तित्व भूल जाता हूँ। मेरी सारी इच्छा-शक्ति लोप हो जाती है। चाहे जो कुछ हो, कल अवश्य ही मैं अपने को पकड़वा दूँगा, और न्याय-विधान सहर्ष ग्रहण करूँगा।"

शिनसुकी अपनी कमजोरी पर आश्चर्य कर रहा था।

इतनी देर हो गई थी, फिर भी सूया नीचे से नहीं आई। नीचे घोर नीरवता छाई हुई थी। न सूया का ही उच्च तीव्र कंठ सुनाई पड़ता था, और न तोकूबी का ही। कभी-कभी केवल हुक्का साफ़ करने का शब्द उस नीरवता को भंग कर देता, और फिर शांति छा जाती।

कहीं एक घंटे के बाद सूया ने अपने सहज उच्च स्वर में कहा—"अच्छा, तुम यहीं मेरी प्रतीक्षा करो, देखूँ मेरे स्वामी क्या कहते हैं ?"

इसके बाद ही सीढ़ियों पर पद-ध्वनि सुनाई दी और सूया शिनसुकी के सामने गद्दे पर बैठ गई। उसकी आँखों से सजग चिंता के लक्षण प्रकट होते थे। वह चुप रही, कुछ बोली नहीं।

शिनसुकी ने उसको मौन देखकर अनुमान किया कि जरूर कुछ दाल में काला है। उसने उत्सुकता से पूछा—"क्यों, क्या बात थी? लक्षण कुछ अच्छे नहीं देख पड़ते।"

"शिनसान, मैं समझती हूँ कि तुम········।" कहती-कहती सूया कुछ सोचकर ठहर गई, और उठकर बाहर सीढ़ियों के चारो ओर देखकर कहा—"तुम बुरा तो न मानोगे, यदि मैं कहूँ कि मैंने तोकूबी से तुम्हारा सब हाल कह दिया है। जो कुछ तुमने किया है, और कल करनेवाले हो, सब भेद बता दिया है। अब तो मैंने कह ही दिया है, कुछ उपाय नहीं है। पर मैंने सब अपनी इच्छा से कहा है।"

शिनसुकी चौंककर पीछे हट गया। यह सत्य था कि वह कल अपने को पकड़वा देगा, लेकिन इसके पहले वह अपने को किसी की नजरों से गिराना भी न चाहता था।

सूया कहने लगी—"अच्छा सुनो, अंत में यह तो होने ही वाला था, चाहे दो रोज पहले मालूम हो या बाद में, बात एक ही है। यह बात छिपने को नहीं। फिर जब मालूम ही होना है, तो मैं ही क्यों न अपने मुँह से कहूँ, जिसमें मालूम हो कि मुझे गर्व है। मैं प्रसन्न हूँ कि मेरे स्वामी ने मेरे लिये यह किया है। क्या ही अच्छा होता, यदि तुम्हारे हाथों से ऐसा गर्हित

काम न होता। शिनसान, अगर मैं तोकूबी से सब हाल न कहती, तो संभव था कि तुम और विपत्ति में पड़ जाते।"

सूया ने उठकर फिर बाहर चारों ओर देखा और कहने लगी—"सुनो, तोकूबी ने मुझे जिस लिये बुलाया था। वह कह रहा था कि मैं मज़े से तुमसे प्रेम करूँ, वह मेरा कुछ अनिष्ट न करेगा। मैं जब तक चाहूँ, तुम्हें अपने साथ रक्खूँ, उसे कोई आपत्ति नहीं हो सकती। मुझे ऐसा मालूम होता है कि कहीं वह दाँव मारनेवाला है, और उसी के लिये मेरी सहायता चाहता है। वह मुझे 'मुकोजोमा' में, एक 'हाटामाटो' सैनिक—आशीज़ावा के घर ले जाना चाहता है। अगर मैं उसके साथ जाऊँ, तो तुम्हें यहाँ अकेले छोड़ना पड़ेगा, इसीलिये मैं इनकार कर रही और किसी प्रकार जाने के लिये तैयार न होती थी। 'मुकोजोमा' जाने की बातचीत बहुत पहले तय हो गई थी। पर जब तक तुम यहाँ हो, मैं कैसे जा सकती हूँ। इसके अतिरिक्त मुझे कुछ दाल में काला मालूम पड़ता है--रंग कुरंग दिखाई पड़ता है। उसका व्यवहार मेरे साथ सदैव अच्छा रहा है, फिर भी उसकी नीयत मेरे ऊपर अच्छी नहीं है। मैं डरती हूँ कि मेरी अनुपस्थिति में कहीं तुम्हें मार न डाले। यह भी तो संभव हो सकता है कि सीजीसान ने तुम्हें देख लिया हो, और तुम्हें मार डालने के लिये तोकूबी को भेजा हो। अगर उन्हें मालूम हो जाय कि कल तुम स्वयं अपने को पकड़वा देनेवाले हो, तो शायद फिर वे तुमसे कुछ न बोलें। यही सब

बातें सोच-समझकर मैंने सब हाल कह देना ही उचित समझा। कहो; क्या कहते हो ?"

शिनसुकी ने पूछा—"और उसने क्या कहा ?"

सूया ने कहा—"जब मैंने सब भेद बताया, तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ, और उसके मुँह से निकल गया—'अरे उस दुधमुँहे बच्चे का यह काम है। बड़ा साहसी है।' लेकिन अब मुझे विश्वास है कि वह तुम्हारा कुछ अनिष्ट न करेगा। शिनसान, तोकूबी के कथन से मालूम होता है कि मुझे जाना ही पड़ेगा। 'मुकोजीमा' जाना अनिवार्य हो गया है, क्योंकि बात बहुत बढ़ गई है।"

सूया उससे एक रात और ठहरने की प्रार्थना करने लगी। वह कहने लगी—"एक रात और ठहर जाओ, क्योंकि मैं सुबह से पहले नहीं लौट सकती। यदि और कहीं की बात होती या दूसरी जगह से बुलावा आता, तो मैं इनकार कर देती, कभी न जाती। यदि आशीजावा के घर न जाऊँगी, तो मुझ पर आपत्ति आने को संभावना है। फिर हाथ से सौ 'रिमो' भी जाते रहेंगे। जो मिलनेवाला है, वह भी हाथ न लगेगा। इसके अतिरिक्त मैं पहले से तोकूबी के साथ इस षड्यंत्र में सम्मिलित हूँ। सब उपाय और युक्तियाँ ठीक हो गई हैं। अगर मैं न जाऊँगी, तो तोकूबी भी मुझसे रुष्ट हो जायगा, क्योंकि उसे भी कुछ लाभ होने की आशा है।"

सूया फिर बार-बार एक दिन और ठहर जाने की अनुनय-विनय करने लगी।

शिनसुकी सूया की जीवन-प्रगति में यह अंतर देखकर मन-ही-मन दावँ-पेच खा रहा था। सूया का, जो इतनी उच्च और महान् थी, यह पतन! 'सुरुगाया'-जैसे संभ्रांत-वंश की बालिका आज एक सरल मनुष्य को ठगने के उद्योग में है—एक दुष्ट दुराचारी के साथ षड्यंत्र में शामिल है। यही नहीं, उसके ठगे जाने का मुख्य कारण बन रही है। सूया अब बहुत दूर जा चुकी है, उसका लौटना असंभव है, वह लौटने के लिये तैयार भी नहीं है, फिर उस जगह वह क्यों रहे, जहाँ हर घड़ी उसकी भी आत्मा नीचे की ओर जा रही है। ऐसे पतित और भ्रष्ट स्थान से जाना ही उत्तम है।

शिनसुकी ने कहा—"अगर ऐसी बात है, तो जरूर जाओ। हम लोग सब कह-सुन चुके। अगर तुम्हारे कहने से एक दिन और भी ठहर जाऊँ, तो विशेष लाभ नहीं है, क्योंकि बार-बार वही बातें होंगी। जब वियोग होना ही है, तो इसी समय होना ठीक है। तुम्हें भी अधिक कष्ट न होगा, क्योंकि तुम अपने काम में लग जाओगी, और मैं भी प्रसन्नता से चला जाऊँगा। अभी बिदा ले लेने से मेरा और तुम्हारा, दोनो का हित है। जिस मनुष्य के गले में फाँसी का फंदा झूल रहा है, यदि वह एक-दो दिन ठहर भी जाय, तो विशेष लाभ नहीं है।"

सूया अपने विचारों में मग्न थी। वह बार-बार अपना हाथ रेशमी गद्दे पर फेर रही थी।

कुछ देर बाद सूया ने कहा—"अगर तुम जाने के लिये

तुले हो, तो मैं क्या कर सकती हूँ। सच बात तो यह है कि मैं तुम्हें इसी तरह भुलावा देकर तब तक अपने पास रखना चाहती थी, जब तक तुम्हारे विचार बदल न जाते। मुझे विश्वास था कि थोड़े दिनों में तुम्हारे विचार बदल जायँगे। लेकिन मैं अब उस ओर से निराश हो गई हूँ। रहा 'मुकोजोमा' जाने के लिये, यह मैंने झूठ कहा था कि मेरा लौटना सुबह तक होगा। सिर्फ़ इसलिये कहा था, जिसमें तुम ठहर जाओ। मैं अब केवल आधी रात तक ठहरने की प्रार्थना करती हूँ, क्योंकि तब तक मैं आ जाऊँगी।"

शिनसुकी ने अपनी सम्मति तो दे दी, लेकिन सूया को विश्वास न हुआ। उसकी ओर से निश्चिंत होने के लिये कहा—"तुम वेश बदलकर, मुझे लेने के लिये वहाँ क्यों न चले आओ। मैं वहाँ तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी, और जब आओगे, तब तुम्हारे साथ-साथ चली आऊँगी।"

शिनसुकी इस बात पर सहमत न हो सका। उसने साफ़-साफ़ नाहीं कर दी।

सूया ने सक्रोध कहा—"यह मेरी अंतिम प्रार्थना है, भीख है, इच्छा है! क्या तुम इसे भी न मानोगे? तुम इनकार कर रहे हो। अगर तुम वहाँ आने की प्रतिज्ञा न करोगे, तो मैं किसी तरह वहाँ न जाऊँगी। चाहे जो कुछ हो, तोकूबी और आशीजावा सब भाड़ में जाय, मैं नहीं जाऊँगी, मैं नहीं जाऊँगी, मैं नहीं जाऊँगी।"

झगड़ा बढ़ता ही गया। दोनो अपनी-अपनी बात पर अड़े हुए दो वीरों की भाँति वाक्-युद्ध कर रहे थे। अंत में तोकूमी को ऊपर आना और मध्यस्थ होना पड़ा। उसकी सब आजिज़ी, बिनती और धमकी फ़िज़ूल हो गई। सूया वैसी ही अटल और अचल बनी रही। अंत में शिनसकी को ही हार माननी पड़ी। उसे सूया की बात से सहमत होना पड़ा; तब कहीं सूया शांत हुई, और उसका चढ़ा हुआ पारा नीचे उतरा।

चतुर्थ खंड

सूया और तोकूबी के जाने के तीन घंटे बाद आधी रात का घंटा बजा। शिनसुकी उसे सुनकर चौंक पड़ा। उसे याद आया कि वह सूया से उसे ले आने के लिये प्रतिज्ञा कर चुका है। उठकर कपड़े पहने, और सूया के घर से बाहर आया। 'अकोबा, जिंज्या' मंदिर से थोड़ी दूर कुछ धान के खेत थे जो 'तेराशीमामुरा' गाँव की हद में ही थे। उन्हीं खेतों के सन्निकट वह घर था, जहाँ का पता उसे दिया गया था।

सूया ने उसे पालकी पर आने के लिये कहा था, लेकिन वह पैदल ही 'मुकोजीमा' की ओर चल दिया। 'नाकाचो' से मुकोजीमा दो मील दूर पड़ता था। शिनसुकी अपने मरने के पहले 'येदो' (टोकियो) की रँगरेलियाँ देखकर अपनी इच्छा तृप्त कर लेना चाहता था, क्योंकि कुछ ही देर बाद केवल 'येदो' से ही नहीं, संसार से बिदा लेकर किसी अज्ञात देश की ओर जाना पड़ेगा। और फिर वहाँ से शायद कभी न लौटेगा।

'नाकाचो' से निकलकर वह बाहर सड़क पर आया। मार्ग नीरव और जन-हीन था। चारो ओर अंधकार छाया हुआ था, किसी के घर से दीप-प्रकाश बाहर निकलता न देख पड़ता था। तीन दिन और दो रात सूया के साथ 'सूटाया' में बंद रहकर केवल विषय-वासना, केवल काम-क्रीड़ा, से शिनसुको का जी

ऊब गया था, अब रात्रि की सुशीतल वायु ने उसमें नव-जीवन भर दिया।

जब वह 'अज़ूमा-बाशी' का पुल पार कर रहा था, उसे याद आया कि यहाँ से थोड़ी ही दूर पर तो उसका पैतृक घर है, जहाँ उसके सुखद शिशु-काल के दिन बीते थे। वह वहीं पर खड़ा हो गया और उस ओर हाथ जोड़कर बोला—"पिताजी, और मित्र किंज़ो, तुम दोनो मुझे क्षमा करना। मैं कल ही अपने को न्याय-विधान के हाथों में सौंप दूँगा।"

जब वह 'मकुराबाशी' का पुल पार कर रहा था, उसकी दृष्टि नदी-जल पर पड़ी, जिसके साथ चाँद अपनी पीली-पीली चाँदनी से आँख-मिचौनी खेल रहा था। उसे उस नदी की धारा से उठती हुई पाप-छाया दिखाई पड़ी, जिसने उसका हृदय कँपा दिया। वह किनारे पर आकर निश्शब्द बहती हुई नदी की ओर देखने लगा, और फिर उसने ऊपर चमकते हुए तारों की ओर। चारो ओर भयानक सन्नाटा छाया हुआ था। कभी-कभी नावों पर आते हुए विलासियों का कल-कंठ या उनकी नौका का छप-छप शब्द ही प्रकृति की निर्जनता को भंग करता था। और, उसके बाद, फिर वही भयावह निस्तब्धता विराजने लगती।

शिनसुकी सोचने लगा—"यह कैसा षड्यंत्र है, जिसमें सूया और तोकूओ दोनो ही सम्मिलित हैं। सूया इतनी कम वयस्क, और उसमें यह साहस! किंज़ो ने जो कुछ सोभोकोचो

का वर्णन किया था, वह सब सत्य है—अक्षरशः सत्य है। अगर मैं पाप-भार से दबा हुआ न होता, तो शायद मैं और सूया स्त्री-पुरुष होकर रहते। यदि सूया के संबंध की सब बातें ठीक होतीं, उनमें कुछ भी सत्यता का अंश होता, तो क्या मैं सूया से विवाह कर सकता था? लेकिन अब तो........अब तो मुझे मरने के लिये तैयार हो जाना चाहिए। कुछ घंटे और...... फिर निवृत्ति के मार्ग का पथिक होना होगा।"

शिनसुकी ऐसी ही चिंताओं में मग्न नदी के किनारे-किनारे सुकोजीमा की ओर चला जा रहा था।

'तेराशामो-मुरा' में आशीजावा सैनिक पदाधिकारी का पता लगा लेना कुछ कठिन काम न था। 'शोगुन शरीर-रक्षकों' के अफ़सर का घर दूर से ही जान पड़ता था। चारो ओर बाँस के लट्ठों से सुरक्षित गाँव के बीचोबीच एक सुंदर अट्टालिका खड़ी थी, जो रहनेवाले की सुरुचि का परिचय दे रही थी। शिनसुकी ने बाहरवाले फाटक से झाँककर भीतर देखा, भीतर रसोई-घर का बाहरी द्वार खुला हुआ था, और वहाँ से दीप-प्रकाश बाहर झाँक रहा था। परंतु चारो ओर सन्नाटा था। कुछ सुनाई न पड़ता था।

फाटक खोलकर वह भीतर चला गया, और पुकारकर कहा—"मैं 'नाकाचो' की गीशा के यहाँ से आया हूँ।"

एक मनुष्य, जो देखने में नौकर जान पड़ता था, रसोई-घर से बाहर आकर उसकी ओर संशकित दृष्टि से देखता

हुआ बोला—"इतनी रात में तुम गीशा के यहाँ से क्यों आए हो ?"

शिनसुकी ने क्षमा-प्रार्थना करते हुए कहा—"ओह......मैं सोभीकीचो सान को लिवा लाने के लिये भेजा गया हूँ।"

यह सुनते ही नौकर उबल पड़ा।

उसने चिल्लाकर कहा—"क्या ? सोभीकीची को लेने के लिये ? मैं अभी तुम्हारा सिर फोड़कर रख दूँगा। बदमाश ! तू भी उन्हीं कुचक्रियों में से एक है, लेकिन मुझे सख्त अफ़सोस है कि तू बहुत देर में आया है। तुम्हारी चालें सब विफल हो गईं। तुम लोगों ने समझा था कि मेरे स्वामी को गधा बनाकर मजे से रुपए ऐंठेंगे और गुलछर्रे उड़ावेंगे ! क्यों ? घबरा नहीं, ठहरा रह, अभी-अभी थोड़ी देर में तुम सब दूसरा ही राग अलापते दिखाई दोगे।"

इस तरह के सद्-व्यवहार और स्वागत से शिनसुकी स्तंभित रह गया। वह चुपचाप उस नौकर का मुँह ताकने लगा। इसी समय उसने घर के भीतर किसी को सक्रोध कहते सुना—"तुम मुझे प्रवंचक और ठग कहते हो। क्या अपने धन की तरह तुम अपनी बुद्धि भी गँवा बैठे हो। तुम्हीं तो सोभीकीची को समझा देना चाहते थे, और अब ?......वाह ! हम लोग ठग हो गए। ऐसे मुँह में आग लगे, जो इस तरह झूठ बोलता है।"

यह कंठ-स्वर तोकूची का था, जो किसी पर अपना क्रोध प्रकट कर रहा था।

थोड़ी देर बाद सूया का कंठ-स्वर सुन पड़ा, जो तीव्र स्वर में कह रही थी—"अब हम लोगों का काम पूरा हो गया। मैं अब कोई बात न छिपाऊँगी। तुम्हारा अनुमान ठीक है। तोकूबी और मेरी दोनो की अभिसंधि अवश्य थी, और हम लोग दोनो मिलकर तुम्हें ठगने ही आए थे। आशीज़ावा, तुम अच्छे बुद्धू थे, जो हम लोगों की चाल में फँस गए। अगर तुममें कुछ मनुष्यता है, तो क्यों नहीं हार मानकर चुपचाप बैठते। उस विषय में कोई बात मत चलाइए। अगर तुम्हें अपने रुपए की ऐसी ही कसक है, तो क्यों नहीं दो-दो हाथ आज़मा लेते? क्यों नहीं तलवार के बल से छीन लेते? क्यों नहीं अपना बदला चुका लेते। लेकिन इतना कहे देती हूँ कि किसी तरह तुम मुझसे रुपया नहीं पा सकते। जो मेरे हाथ लग गया, वह मेरा है, और मेरे पास रहेगा। बस यही साफ़-साफ़ और ठीक बात है।"

इसके बाद फिर सन्नाटा छा गया। जैसे किसी तूफ़ान के आने के पहले प्रकृति शांत और नीरव हो जाती है, और फिर उसके बाद ही कँपा देनेवाला झंझा-वात आता है। वह नीरवता कभी-कभी सूया के तीव्र कंठ-रव से ही टूटती थी।

थोड़ी ही देर बाद तोकूबी ने चिल्लाकर कहा—"तुमने तलवार खींच ली है, अच्छा आ जा, सिपाही की दुम। देखूँ तेरी वीरता! ज़रा ठीक से तलवार पकड़, ठीक से हाथ चला; नहीं तो अपने तू ही हाथ से अपना सिर काट लेगा।"

इसके बाद फिर तलवारों की खटाखट सुनाई पड़ने लगी, जैसे चार-पाँच आदमी लड़ रहे हों। बीच-बीच में सूया के उत्तेजक शब्द और भय-विह्वल चीख़ सुनाई पड़ती थी। दरवाज़ों के शीशे टूट रहे थे; परदे फट रहे थे, और धमधमाहट का शब्द बराबर आ रहा था। क्षण-भर के लिये सब शांत हो गया, और एक दुख-भरी चीख़ सुनाई दी। दूसरे ही क्षण ख़ून से लथ-पथ तोकूबी घर से बाहर निकलकर भागा। उसके पीछे-ही-पीछे सूया भी खुले बालों-सहित भागी चली आ रही थी। ज्यों ही वह घर के बाहर आ रही थी, किसी ने पीछे से उसकी गर्दन पकड़ ली। वह लड़खड़ाकर वहीं भयभीत होकर गिर पड़ी। सूया को पकड़नेवाला आशीज़ावा था। उसने अपनी तलवार उसे मारने के लिये ऊपर उठाई। तलवारवाला हाथ नीचे गिरने ही वाला था कि शिनसुकी ने दौड़कर उसका हाथ पकड़ लिया, और कहा—"आपका क्रोध करना बिल्कुल ठीक है, किंतु यह निर्दोष है। मैं विनय करता हूँ कि आप इसकी जान छोड़ दें।"

आशीज़ावा ने अपना हाथ नीचे करते हुए कहा—"तुम कौन हो?"

फिर शिनसुकी की ओर देखा। उसके सामने एक चौंतीस-पैंतीस वर्ष का सुंदर युवा पुरुष खड़ा था। वह उस दिन काले मख़मल की पोशाक पहने था, उसके मुख से सज्जनता टपकी पड़ती थी। शिनसुकी आशीज़ावा की दृष्टि में एक भद्र पुरुष जान पड़ा।

शिनसुकी ने उत्तर दिया—"मैं सेवक हूँ, 'नाकाचो' से सोभीकीची-सान को लेने आया था। आप भद्र पुरुष हैं, और अपनी सज्जनता के लिये विख्यात हैं। तरस खाकर इसकी रक्षा कीजिए, साथ ही आप अपने नाम की रक्षा कीजिए। कृपा कर आप यह तलवार अपनी म्यान में रख लीजिए।"

आशीज़ावा ने तलवार म्यान में रखते हुए सूया से कहा—"जाओ, मैं तुम्हें छोड़ता हूँ। जाओ, रुपया भी ले जाओ। मैं समझूँगा कि मैंने मेहर का रुपया दिया है। जा, अब यहाँ फिर कभी अपना काला मुँह न दिखाना। भाग जा, अपना मुँह काला कर।"

सूया ने भी घृणा-पूरित स्वर में उत्तर दिया—"यहाँ आऊँगी। अगर मेरे तलवे चाटकर भी यहाँ आने को कहेगा, तो भी मैं नहीं आने की। बदमाश कहीं का।"

जिस नौकर ने शिनसुकी से बातें की थीं, उसका कहीं पता न था। फाटक पर तोकूबो बैठा हुआ दर्द से चिल्ला रहा था। तोकूबी साहस और वीरता के लिये प्रख्यात था, किंतु उसके घाव भी इतने गहरे थे कि उसकी शक्ति-साहस ने जवाब दे दिया था। वह मांस के लोथड़े की भाँति निर्जीव पड़ा था। उसने चिल्लाकर कहा—"सूया, सूया, मेरे घाव बहुत गहरे हैं। खून बराबर निकल रहा है। मैं अब जीवित नहीं रह सकता। आशीज़ावा कुत्ते की मौत मरेगा! शिनसुकी की सहायता से मुझे उठाओ। मेरी मृत्यु का प्रतिशोध ज़रूर लेना।"

सूया ने कहा—"तुम क्या बक रहे रहो। हैं! सिर्फ़ इन खरोंचों से इतना ज्यादा घबरा गए! तुम्हें शर्म नहीं आती। उस बद-माश का नौकर कहीं गया है। यहाँ अधिक देर ठहरना विपद् से खाली नहीं है। पुलीस के आने से पहले ही भाग चलने में कल्याण है। उठो, उठो। मेरे हाथ का सहारा लेकर उठो।"

यह कहकर सूया ने कुछ निर्दयता के साथ उठाया। और, उसे अपने कंधे के सहारे चलने के लिये कहा।

पुलीस का नाम सुनते ही शिनसुकी का माथा ठनका। वह घबरा गया। अगर वह यहाँ पकड़ा जायगा, तो फिर वह किसी प्रकार भी अपने को निर्दोष प्रमाणित न कर सकेगा। वह भी उस षड्यंत्र का सम्मिलित व्यक्ति समझा जायगा। किंतु ऐसी दुरवस्था में दोनो को छोड़कर भाग जाना भी तो उचित नहीं देख पड़ता था। इसलिये वह सूया के पास आकर तोकूबी को ले जाने में सहायता देने लगा। दोनो ओर से तोकूबी को पकड़कर वे आँख से ओझल हो जाने के लिये दौड़ने लगे। उन्होंने तोकूबी को भी अपने साथ-साथ दौड़ने के लिये मजबूर किया।

आशीजावा के घर से निकलकर वे धान के खेतों की ओर भागे। पाँच-छः खेत पार करके वे नदी के किनारे एक झाड़ी की ओट में दम लेने के लिये ठहर गए। यहाँ पर वे निरापद् थे। शिनसुकी अपने रूमाल से तोकूबी के घावों पर, जिनसे अब भी खून बह रहा था, पट्टी बाँधने लगा।

तोकूबी नदी के किनारे बैठा था, और शिनसुकी उसकी सेवा-उपचार में लगा हुआ था। कृतज्ञता से तोकूबी का रोमांच हो रहा था। उसने बड़े ही करुण स्वर में कहा—"शिनसुकी सान, मैं इस दया के लिये सदैव कृतज्ञ रहूँगा। मेरा रोम-रोम तुम्हें आशीर्वाद दे रहा है। मुझे किसी तरह घर ले चलो, फिर मैं बच जाऊँगा। तुम्हीं मुझे जीवन-दान दे सकते हो।"

सूया ने कहा—"क्या तुम घर तक चलने की शक्ति अनुभव करते हो? क्या तुम घर तक चल सकोगे?"

सूया का स्वर प्रगाढ़ ममत्व से भरा हुआ था। उसने फिर कहा—"कुछ डर की बात नहीं है, अगर तुम न चल सकोगे, तो हम दोनो तुम्हें अपने कंधों पर बिठाकर ले चलेंगे।"

तोकूबी ने साहस एकत्रित करते हुए कहा—"नहीं, अब मैं अच्छा हूँ, चल सकूँगा।" यह कहकर तो उसने फिर उठने का प्रयत्न किया, किंतु निर्बलता से फिर गिर पड़ा।

सूया ने कहा—"मैं देखती हूँ कि तुम किसी तरह घर नहीं पहुँच सकते। तुम अब और अधिक कष्ट क्यों सहो। मैं तुम्हें वहाँ सहज ही भेज सकती हूँ, जहाँ जाने के लिये तुम उपयुक्त हो, और जाने के लिये तैयार हो—यानी नरक में। नारकीय कीट, तेरे लिये वही स्थान सबसे उत्तम है।"

यह कहकर उसने उसके बाल पकड़कर नीचे गिरा दिया। तोकूबी सँभल न सका, और गिर पड़ा। सूया ने अपने

वस्त्रों के भीतर से एक तेज छुरा निकाला और मारने के लिये अपना हाथ ऊँचा किया। छुरा तोकूबो का गरम-गरम रक्त पान करने के लिये घुसने ही वाला था कि तोकूबी ने उसका हाथ पकड़ लिया। तुरंत ही अमानुषिक बल से उसे खींचकर जमीन पर गिरा दिया, और तुरंत ही उठकर खड़ा हो गया।

तोकूबो ने चिल्लाकर कहा—"अगर मैं वहाँ जाऊँगा, तो तुम्हें भी अपने साथ ले जाऊँगा। मैं अकेले नहीं मरूँगा।" यह कहकर वह भी छुरा निकालकर सूया को मारने के लिये झपटा।

ये घटनाएँ इतनी तेजी से घटीं कि शिनसुको को कुछ भी सोचने-विचारने का अवसर नहीं मिला। वह स्तंभित खड़ा रह गया। अभी तक वह अपना कर्तव्य स्थिर न कर सका था। इसके अतिरिक्त तमिस्रा की प्रगाढ़ छाया में, वह कुछ न देख सकता था कि क्या हो रहा है। वह उसी अंधकार में दोनों को टटोल-टटोलकर ढूंढ़ने लगा।

टटोलते-टटोलते उसे मालूम हुआ कि तोकूबी की गरदन सूया के पैरों के नीचे दबी है। उसने तुरंत ही दोनों को अलग कर दिया।

तोकूबी ने कहा—"मालूम होता है कि तू भी उसके षड्यंत्र में सम्मिलित है। आ, तू भी आ कुत्ते, देखूँ तू मेरा क्या कर लेता है।"

यह कहकर वह शिनसुकी पर झपटा, लेकिन उसने बड़ी ही सरलता से उसका अस्त्र छीनकर फेंक दिया।

इसी बीच में सूया ने तोकूबी के पैर पकड़कर घसीट लिए, और वह गिर पड़ा। फिर दोनों गुथ गए। घायल हो जाने पर भी तोकूबी सूया से कहीं अधिक बलवान् था। तोकूबी ने उसे अपनी ओर घसीटा और दोनों हाथों से उसका गला दबाने लगा। यदि ज़रा-सा और बल उसके शरीर में रहता, तो सूया का प्राण शरीर से विलग हो जाता। अभी तक तोकूबी का साहस काम कर रहा था, लेकिन धीरे-धीरे उसकी शक्ति क्षीण हो रही थी। साहस भी जवाब दे रहा था।

सूया ने चिल्लाकर कहा—"शिनसान! कहाँ हो? मेरी रक्षा करो।"

कहते-कहते सूया का कंठ-स्वर बंद हो रहा था। उसने रुकते हुए कंठ से कहा—"यह मुझे मारे डालता है, क्या तुम नहीं समझते कि इससे बढ़कर फिर हमें दूसरा सुअवसर न मिलेगा। तोकूबी को समाप्त करो। यह तो स्वयं मर रहा है। इसे मारकर हम लोग निरंकुश हो जायँगे, और फिर कोई बाधा न रहेगी। इससे बढ़कर दूसरा अवसर हाथ नहीं आएगा, ईश्वर के लिये जल्दी आओ, और इसे समाप्त करो।"

सूया कह तो रही थी, किंतु उसका कंठ-स्वर बंद हो रहा था। उसका स्वर धीरे-धीरे मंद पड़ रहा था, ऐसा मालूम हो रहा था कि क्षण ही भर में उसका कंठ सदैव के लिये बंद हो जायगा।

सूया ने चिल्लाने का प्रयत्न करते हुए कहा—"अरे शैतान, मेरी साँस बंद हो रही है, मैं मर रही हूँ। शिनसान, मेरी रक्षा करो।"

सूया अभी चिल्ला ही रही थी कि शिनसुकी ने वही छुरा, जो थोड़ी देर पहले तोकूबी से छीना था, उसकी पीठ में घुसेड़ दिया। तोकूबी सूया को छोड़कर शिनसुकी की ओर झपटा। इस समय तोकूबी अपने हाथ-पैर बड़े वेग से चला रहा था, और नाखूनों तथा दाँतों से शिनसुकी को घायल करने लगा। शिनसुकी ने जब सांता या सीजी की स्त्री के प्राण लिए थे, तो उसे किसी से भी इतना लड़ना-झगड़ना न पड़ा था, जितना कि घायल तोकूबी से। दोनो गुथे हुए बैलों से भी अधिक बल से लड़ रहे थे। कभी वे गिर पड़ते, और उठकर फिर लड़ते, कभी एक-दूसरे के बाल खींचते, और कभी गुथकर अपनी-अपनी शक्ति लगाते। थोड़ी देर बाद शिनसुकी ने घात लगाकर अपने हाथ का छुरा दूसरी बार उसकी बगल के नीचे घुसेड़ दिया।

"मैं······म······र······ता······हूँ,······लेकिन······मे······रा······अ······भि······शा······प······तु······म······पर······है।" कहते-कहते तोकूबी गिर पड़ा। उसी समय शिनसुकी ने दूसरा आघात किया, और तोकूबी निर्जीव हो गया।

"सूया ने अपने मन को बोध देते हुए कहा—"एक नारकीय कीट के शाप से मैं नहीं डरती।"

"यह तीसरा मनुष्य है, जो मेरे हाथों से मरा है। अब मेरा निस्तार नहीं है। ईश्वर के लिये तुम भी मेरे साथ मरो।" शिनसुकी ने तोकूबी की लाश फेंकते हुए कहा।

सूया ने उत्तर दिया—"तुम कैसी बातें कर रहे हो। यदि मरना ही था, तो फिर इसको क्यों मारा? इसके मरण से लाभ? अब तुम पाप के गड्ढे में बहुत नीचे उतर गए हो, जहाँ से तुम ऊपर नहीं उठ सकते। वहीं क्यों नहीं ठहरते, और संसार के सुख का उपभोग करते? अगर हम लोग किसी से कहेंगे नहीं, तो हमारा भेद कोई कैसे जानेगा? यह भीरुता कैसी? जरा होश में आओ, सुचित्त होकर स्थिर होओ। मैं मरना नहीं चाहती, नहीं, कभी नहीं।"

शिनसुकी अपने आपे में न था। वह सब समझता-बूझता हुआ जानकर उसकी चालों में फँसा है, लेकिन अब वहाँ से वह लौट भी तो नहीं सकता। आज तीन दिन से, नहीं कई महीनों से, जिस विचार की पुष्टि वह कर रहा था, वह विचार शिथिल पड़कर तोकूबी के खून की धारा में पड़कर बह गया। शिनसुकी को अब अपना जीवन प्यारा हो गया। अब वह उसकी रक्षा करेगा। यौवन के सुखद प्रातःकाल में वह संसार जान-बूझकर न छोड़ेगा। वह संसार के यावत् सुखों का उप-भोग करेगा, और सूया के साथ भोग-विलास में अपना जीवन व्यतीत करेगा।

शिनसुकी ने धीमे स्वर में कहा—"हाँ, अब मैं ऊपर

नहीं उठ सकता, और अब तुम्हें भी नहीं छोड़ सकता। सूचान, मैं तुम्हारा हूँ।"

सूया ने पागलों-जैसी प्रसन्नता से कहा—"क्या तुम मेरे लिये इतना करोगे? मैं कह नहीं सकती कि मैं कितनी प्रसन्न हूँ।"

सूया हर्ष से नाचने लगी, और नाचते-नाचते रक्त से सने हुए शिनसुकी के वक्ष पर गिर पड़ी।

सूया तोकूबी को लाश छिपाने का उद्योग करने लगी। शिनसुकी पत्थर की मूर्ति की तरह बैठा सूया का पैशाचिक कार्य देख रहा था। सूया ने पहले तोकूबी की जेब से एक थैली निकाली, जिसमें आशीज़ावा के दिए हुए सौ रिमो रक्खे थे।

उस थैली को उसने अपनी जेब में रखते हुए कहा—"नरक जाने के लिये रुपयों की आवश्यकता नहीं है।"

उसने सब कपड़ों को बाँधकर एक बड़ा बंडल बनाया, और रस्सी से शव के साथ बाँध दिया। उसने रत्ती-रत्ती सब चीज बाँध ली, क्योंकि वह हत्या का कुछ भी प्रमाण छोड़ जाना नहीं चाहती थी। फिर उस शव के मुख पर छुरे से खूब गहरे-गहरे घाव करके बिगाड़ दिया। कोई भी न कह सकता था कि यह तोकूबी का शव है। फिर उसे घसीटकर नदी-तट के दल-दल के नीचे गढ़ा खोदकर दबा दिया, और सब चीजें उठाकर नदी में फेक दीं।

वे फिर शहर के बाहर-बाहर 'नाकाचो' आए । उषा-काल की सफ़ेदी धीरे-धीरे पूर्व-दिशा से झलकने लगी थी, जब दोनों सोने के लिये चारपाई पर लेटे ।

पंचम खंड

तोकूबी के घरवालों तथा संबंधियों ने बहुत पता लगाया, पुलीस ने बहुत सिर मारा, लेकिन तोकूबी का कुछ भी पता न लगा। आशीजावा के घर से भागने के बाद क्या हुआ, कोई न जानता। आशीजावा ने स्वीकार किया था कि तोकूबी उसके यहाँ आया था, और वह उसके हाथसे घायल भी हुआ था। लेकिन वह अपने दो साथियों के साथ सकुशल चला गया था। सूया का बयान था, जब हम लोग आशीजावा के घर से भागे, इतना डर गए थे कि हम लोग एक-दूसरे की परवा न करके, अपनी-अपनी राह भागे—किसी ने एक-दूसरे की खबर नहीं ली। मैं नहीं कह सकती कि क्या हुआ, और उस पर क्या बीती। उसी घड़ी से उसका पता नहीं है। लेकिन उसके घाव बहुत गहरे और सांघातिक थे, यदि वह किसी तरह भाग भी गया होगा, तो बच नहीं सकता।"

भाग्य अनुकूल था, वे साफ़-साफ़ निकल गए। किसी ने उन पर शक तक नहीं किया। तोकूबी का शव भी न मिला। कोई न जानता था कि उसका शव कहाँ लोप हो गया है। यही आश्चर्य का विषय था। सनसनी धीरे-धीरे कम होने लगी। उत्सुकता लोप होने लगी। संसार का काम वैसे ही चलने लगा। तोकूबी को धीरे-धीरे लोग भूल गए।

तोकुबी शिनसुकी और सूया के सुख-मार्ग का कंटक था। उससे मुक्त होकर वे निरंकुश होकर विलास-सागर में डूबने-उतराने लगे। शिनसुकी रात-दिन सूया के पास ही बैठा रहता, सूया भी बहुत कम बाहर जाती। उनके पास यथेष्ट धन था, वे उसी का उपभोग कर रहे थे। शिनसुकी और सूया के विषय में नाना प्रकार के अपवाद उड़ रहे थे। अपने-अपने अनुमान के अनुसार ही अपनी-अपनी बात उड़ा रहे थे, परंतु इससे सूया की ख्याति में कुछ भी अंतर न पड़ा था। ज्यों-ज्यों वह अपने को खींच रही थी, त्यों-त्यों लोगों की लालसा उसकी ओर बढ़ रही थी। सूया इस समय अपने उत्थान की चरम सीमा पर थी। उसका जीवन-प्याला ख्याति और साफल्य-मदिरा से लबालब था, सूया उसे वैसा ही भरा हुआ देखना चाहती थी।

उपर्युक्त घटना के लगभग डेढ़ महीने बाद एक दिन सूया के द्वार-रक्षक ने पुकारा—"नारोहीराचो के किंजो आए हैं।"

शिनसुकी उसी समय नाश्ता करने के लिये बैठा था। वह काँपा और अपने को छिपाने के लिये सूया के कमरे में घुस गया। सूया भी भयभीत होकर शिनसुकी का मुँह ताकने लगी। किसी को स्वप्न में भी आशा न थी कि किंजो इस भाँति अचानक आ जायगा। दोनों एक प्रकार से उसे भूल ही गए थे। सूया का सोता हुआ साहस फिर जागा और वह किंजो से मिलने के लिये नीचे गई।

सूया और किजो में कुछ विवाद-सा होने लगा।

सूया कह रही थी—"मैं इस नाम के किसी भी व्यक्ति को नहीं जानती। मेरे यहाँ नहीं है, और न कभी यहाँ पर था ही।"

किंतु सूया के कंठ-स्वर से भय साफ़ प्रकट हो रहा था।

किंजो ने कहा—"अगर आप कहती हैं कि मैं नहीं जानती, तो ठीक है। मैं इस बकवास पर न आपका समय नष्ट करूँगा, न अपना। अगर वह मनुष्य (शिनसुकी) अपनी प्रतिज्ञा भूल गया है, मैं उसे पकड़वाऊँगा नहीं। उसके विरुद्ध होकर कोई काम ऐसा न करूँगा, जिससे उसको हानि पहुँचे। परंतु मुझे विश्वास है कि उसके हाथों अब किसी का उपकार भी नहीं हो सकता। अच्छा, अब मैं आपसे बिदा होता हूँ, लेकिन सोभीकीची सान, अगर आपसे कभी भी शिनसुकी सान से भेट हो, तो उससे कह दीजिएगा कि वृद्ध किंजो कभी अपनी प्रतिज्ञा न भूलेगा, चाहे भले ही उसको अपनी प्रतिज्ञा विस्मरण हो गई हो। मेरी ओर से वह किसी अपकार की आशंका न करे। उसे विश्वास दिला देना कि मेरे मुँह से कभी ऐसी कोई बात न निकलेगी, जो उसकी हानि का कारण हो। साथ ही यह भी कह दीजिएगा कि अगर वह जीवित रहना चाहता है, तो ईमानदारी और सदाचार से अपना जीवन व्यतीत करे। कम-से-कम वह उस आदमी को निराश न करे, जो उस पर विश्वास करता है। दूसरे शब्दों में, वह अपने

पुराने पापों को सदाचार-जल से धोता हुआ नए प्रकार से जीवन बितावे। और, एक नया ही मनुष्य हो जाय। पुराने पाप-पथ को छोड़कर सत्पथ पर आ जाने से ही उसका कल्याण है। यही मेरी आंतरिक इच्छा है। मेरी विनीत प्रार्थना है कि उससे मेरा यह संदेश कह दीजिएगा, यदि किसी और कारण से नहीं, तो कम-से-कम इस वृद्ध को बाधित करने के लिये ही मेरा संदेश कह दीजिएगा। वास्तव में मुझे बड़ा दुःख है कि मैंने आपका इतना समय नष्ट किया। अच्छा नमस्कार!"

यह कहकर किंजो चला गया।

सूया ने मन ही-मन अपने कौशल पर प्रसन्न होती हुई, ऊपर आकर घबराए हुए शिनसुकी से कहा—"देखो, कितनी चतुरता से मैंने उसे बिदा कर दिया है। तुमने तो सब कुछ सुना ही होगा।"

लेकिन शिनसुकी के मुख पर प्रसन्नता का एक चिह्न तक न था। वह कातर और भयभीत बैठा रहा।

सूया ने उसकी ओर देखते हुए कहा—"यदि तुम्हें इसकी ओर से इतना ही भय है, तो इसे भी······। क्यों क्या राय है?"

शिनसुकी ने चौंककर कहा—"नहीं-नहीं, किंजो आदमी नहीं, देवता है! ईश्वरीय कोपाग्नि बड़ी प्रचंड होगी!"

इसके बाद दोनों चुप हो गए।

शिनसुकी की आत्मा धीरे-धीरे मलिन हो रही थी। पूर्व निर्मलता और पवित्रता सब लोप हो गई थी। एक मनुष्य को मारकर उसी के धन से आनंद-विलास करना, यही उसका

जीवन-कार्य हो गया था। उसकी आत्मा उसे ज़रा भी न धिक्कारती थी। वे दोनो निरंकुश होकर पाप-सागर में डूबे रहते। जब तक वे पाप-मदिरा का एक घूँट न पी लेते, उनकी नसों में आवेश दौड़ता ही न था, जब तक एक नया पाप न कर लेते, उनका मन उद्विग्न रहता और खान-पान में, हास-विलास में, उनका मन ही न लगता था। शिनसुकी कभी-कभी सोचता, शायद अभी उसके हाथों से दो-एक हत्याएँ होना अवशेष हैं, क्योंकि उसका शरीर शिथिल हो रहा था, और मन-तुरंग बे-बस होकर पाप की ओर दौड़ा जा रहा था। पाप अपनी संपूर्ण शक्ति से उसे अपनी ओर बुला रहा था। शिनसुकी की आत्मा में इतना बल न रह गया था कि वह उसका प्रत्याख्यान कर सके। वह एक नया पाप करने का सुअवसर ढूँढ रहा था।

आजकल सीजी का व्यापार भी ख़ूब उन्नति कर रहा था। सीजी और सूया प्रायः दोनो ही मिला करते थे, क्योंकि सूया को अपने प्रेमिकों के साथ जल-विहार करने जाना पड़ता था।

⁂ जापानी जल-विहार के प्रेमी होते हैं। वे गीशा के साथ नौका-विहार करते या किसी चाय-घर में उनके साथ मदिरा-पान करते हैं। नौका और चाय-घर, ये जापानियों के क्रीड़ा-स्थल हैं। सीजी मल्लाह था, और उसकी कई नावें चलती थीं। सूया गीशा होने के कारण अपने प्रेमिकों के साथ कभी-कभी उसकी नावों पर भी जल-विहार करने जाती होगी। यही कारण उन दोनो के मिलने का था।

सोजी ने कुछ अपने व्यापार से और कुछ चोरी-बदमाशी से अच्छा धन पैदा कर लिया था। धनी होने के साथ उसकी ख्याति भी उत्तरोत्तर बढ़ रही थी। उसने पुराने घर की जगह नया घर बना लिया था, और धीरे-धीरे उसका कारबार भी बढ़ रहा था। अपनी जाति में ही नहीं, वह नगर-भर में प्रख्यात था। निर्धनी उसे भय की दृष्टि से देखते थे, और धनी सम्मान की दृष्टि से। सोजी एक ही व्यक्ति से डरता था, वह तोकूबी था। वह भी मर चुका था। अब उसके पथ का रोड़ा साफ हो गया था। सोजी निरंकुश होकर स्वच्छंदता से अपना पाप-व्यवसाय चला रहा था।

सूया को बार-बार देखकर उसकी प्रेमाग्नि फिर भड़क उठी। अभी तक वह सूया को भूल न सका था। उसके प्रति प्रेमाग्नि, जो अभी तक तोकूबी के भय से मलिन होकर उसके हृदय के कोने में सुलग रही थी, अब उसके मर जाने से वह बड़े वेग से भड़क उठी, और वह सूया को हस्तगत करने और उसे अपनी प्रेयसी बनाने के लिये आतुर हो उठा। सूया की ओर से वह बिल्कुल निश्चिंत था, उसे विश्वास था कि सूया कभी उसका भंडाफोड़ नहीं कर सकती। सूया उसके पाप-व्यवसाय को भली भाँति जानती थी, किंतु सोजी को विश्वास था कि वह उसके विरुद्ध कभी भी अस्त्र धारण न करेगी—उसका भेद खोलकर उसे पकड़वाने का यत्न न करेगी। सोजीअब सूया को प्रसन्न करने की चेष्टा करने लगा। वह उसे

बहुमूल्य उपहार देकर उसका ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का यत्न करने लगा। अवसर पाकर वह अपना प्रेम भी प्रकट करता, और उससे भी प्रेम-प्रत्युत्तर की आशा करता।

सूया भी अपनी घात में थी। उसके हृदय में भी प्रतिहिंसाग्नि सुलग रही थी। वह भी सीजो को अपने प्रेम-जाल में फँसाना चाहती थी। वह सीजो के प्रेमोपहार एक मंद मुसकान-सहित स्वीकार करती और उसके प्रेम-कथन को चुपचाप सुनती। कभी हँसकर यह भी प्रकट करती कि वह उस पर प्रसन्न है, कभी गाकर उसकी प्रेमाग्नि में घी डालती और कभी रूठकर उसे मृतक-तुल्य कर देती—किंतु सूया उसे सदैव अपने से एक हाथ की दूरी पर रखती, उसे पास न फटकने देती थी। ज्यों-ज्यों वह सीजो से दूर खिचती, त्यों-त्यों वह उसकी ओर पतंग-वेग से झपटता। सीजो उसे एक-से-एक बहुमूल्य उपहार देता, वह उन्हें स्वीकार करके भी उसकी मनोकामना पूर्ण न करती। सूया की आंतरिक अभिलाषा थी कि वह इसी प्रकार उसका सब धन लेकर उसे मार्ग का भिखारी बना दे। धीरे-धीरे सीजी का भी दिवाला खिसकना शुरू हो गया था। जब कभी सीजो प्रेम-भिक्षा माँगता, तो सूया कहती—"मुझे तुम्हारी बात मानने में कोई आपत्ति नहीं है, लेकिन मैं तब तक तुम्हारी इच्छा पूर्ण करने में असमर्थ हूँ, जब तक तुम्हारी ईचोसान तुम्हारे साथ है। मैं भी तुमसे प्रेम करती हूँ, लेकिन क्या करूँ, ईचोसान के रहते मैं मजबूर हूँ।"

ईची, सीजी की तीसरी स्त्री का नाम था। ईची सीजी की गृहिणी होने के पहले 'योशीचो' की गीशा थी। उसका व्यवसाय चलता न था, इसीलिये उसने सीजी का आश्रय ग्रहण किया था।

सीजी को भी एक स्त्री की अत्यंत आवश्यकता थी, इसी-लिये उसने ईचो-जैसी गीशा को अपने घर में डाल लिया। ईची में सौंदर्य या गुण कुछ न था, लेकिन फिर भी वह सीजी पर कठोर शासन करती थी। यदि सीजी की लंपटता की वह एक भी बात सुन लेती, तो आग हो जाती, और अच्छी तरह से सीजी की दुर्दशा करती। कभी-कभी मार-पीट तक की नौबत पहुँचती, वाक्-बाणों की वर्षा तो साधारण बात थी। ईचो की भयंकर मूर्ति ने धीरे-धीरे उस पर आतंक जमाना आरंभ कर दिया था, और वह ईची से भयभीत रहने लगा। सीजी यद्यपि सूया को हस्तगत करने के लिये लालायित था, परंतु ईची को दूध की मक्खी की तरह फेंककर उसके स्थान पर सूया को प्रतिष्ठित करने का उसे साहस भी न होता था। ईची का नाम सुनकर उसका सारा प्रेम-आवेग शांत हो जाता।

सूया के मुख से उपर्युक्त बातें सुनकर सीजी कहता—"उस बुढ़िया के रहते हुए भी तो हम लोग आनंद से रह सकते हैं। उसे कोने में पड़ी-पड़ी टर्राने दो, और हम लोग आनंद करें। वह हम लोगों का क्या बिगाड़ लेगी? एक तो उसे मालूम

ही न होने पायगा, और अगर मालूम भी हो जायगा, तो हम लोगों का क्या कर लेगी ? सबसे बड़ी बात तो यह है कि उसे मालूम ही न होने पायगा। हम लोग आनंद-पूर्वक रह सकते हैं।"

इस पर सूया उत्तर देती—"तुम रह सकते हो, लेकिन मैं तो नहीं रह सकती। अगर तुम्हारा मेरे ऊपर एकांत प्रेम है, तो मेरे अतिरिक्त तुम किसी दूसरे को प्यार नहीं कर सकते, और न दूसरी पत्नी रख सकते हो। अगर मैं रहूँगी, तो मैं ही अकेली रहूँगी। मैं किसी दूसरी स्त्री के रहते तुम्हारे साथ रहने के लिये तैयार नहीं हूँ। एक म्यान में एक ही तलवार रह सकती है।"

इसी तरह की बातों से वह सीजी का ईची के विरुद्ध उत्ते-जित करती। ईची से विद्वेष करवा देना ही उसका मुख्य अभिप्राय था। वह सीजी को चारों ओर से दुःखी करना चाहती थी।

एक दिन सूया ने कहा—"सीजी सान, अगर इस तरह बढ़-बढ़कर मेरे प्रेम की बातें मारते हो, तो क्यों नहीं उस काँटे को, जो हमारे-तुम्हारे प्रेम में बाधा-रूप है, अपने पथ से हटा देते। जो स्त्री तुमको इतना कष्ट देती है, उसी को अपने हृदय से लगाए हुए हो।"

फिर थोड़ी देर बाद कहा—"तुम्हारा-जैसा आदमी शिन-सान-जैसे निरीह व्यक्ति की हत्या कर सकता है या करवा

सकता है, जिसका अपराध केवल मुझसे प्रेम करना था, तब न-मालूम क्यों, ईंची बची हुई है, जो हम दोनो के प्रेम-मार्ग की रोड़ा हो रही है......।"

सीजी ने बात काटकर कहा—"वह दुष्कर्म सांता का था, मेरा उसमें कुछ भी हाथ न था। परंतु आजकल तो तुम ग़जब की साहसी रमणी हो गई हो।"

सीजी प्रशंसा-पूर्ण नेत्रों से सूया की ओर देखने लगा। ज्यों-ज्यों वह सूया की ओर देखता, वह उस पर मुग्ध होता जा रहा था। सूया ने उपाय भी बता दिया था, फिर उसी उपाय से वह क्यों न सूया-जैसी सुंदरी के साथ आनंद करे। वास्तव में ईंची उसके सुख-मार्ग की कंटक है। उसके जीवित रहते वह किसी तरह अपने को सुखी नहीं कर सकता। वह भी उसे किसी तरह छोड़ नहीं सकती। कहीं भी जाय, उससे निस्तार नहीं।

क्षण-क्षण में सीजी के मुख का रंग बदल रहा था। उसके हृदय में अनेकों विचार आ-जा रहे थे। सूया उसके मुख का उतार-चढ़ाव निरख रही थी। सीजी ने फिर उस विषय में कोई बात नहीं की, और वह चला गया। उसके जाने के बाद सूया ने मन-ही-मन कहा—"मेरा आज का भी वार ठीक ही बैठा है। थोड़े ही दिनों में, एक ही फंदे में सीजी और उसकी ईंची, फँसे हुए दृष्टि आवेंगे। अब मुझे अधिक कष्ट न करना पड़ेगा। जिस दिन......ये दोनो फँस जायँगे, उसी दिन मेरे दिल की आग बुझेगी।"

सूया शिनसुकी से कोई बात न छिपाती थी। प्रति दिन का हाल वह उससे रात्रि के समय, जब वे शयन करते थे, कहती थी। फिर दोनो अपनी प्रतिहिंसाग्नि शांत करने के उपाय सोचते-सोचते सो जाते।

शिनसुकी कभी घर के बाहर न निकलता था। जब कभी उसका निकलना अनिवार्य हो जाता था, तभी वह निकलता, और अपना वेश बदलकर। शिनसुकी के संबंध में नाना प्रकार की कल्पनाएँ की जाती थीं। कोई उसके व्यक्तित्व से परिचित न था। केवल इतना जानते थे कि वह सूया का प्रेमी है, और सूया का भी उस पर एकांत प्रेम है। इससे अधिक वे उसके विषय में कुछ भी न जानते थे।

उसी वर्ष के आषाढ़ मास में सीजी के दल के लोग पकड़े गए। पुलीस को सीजी पर भी संदेह हुआ। सीजी की रक्षा का देश छोड़कर भागने के अतिरिक्त दूसरा उपाय न था। किसी दूर के गाँव में जाकर कुछ दिनों आनंद से अपना जीवन व्यतीत करे, और जब यहाँ सब शांत हो जाय, तब फिर आकर अपना व्यवसाय स्थापित करे। यही एक उपाय था। ईची को भी अपने पथ से दूर करने के लिये यही सर्वोत्तम अवसर था।

सीजी ने सूया से भाग चलने का प्रस्ताव किया। सीजी ने कहा कि कहीं दूर देश जाकर पति-पत्नी-रूप में वे आनंद से जीवन-यात्रा करेंगे। इस समय सीजी के पास यथेष्ट संपत्ति

है, उसे वह अपने साथ ले लेगा, और फिर उन्हें कई वर्षों तक धन की चिंता न रहेगी। रात-ही-रात नाव द्वारा भाग चलना निश्चित हुआ। सूया ने सहर्ष अपनी स्वीकृति दे दी।

आषाढ़ मास में, बुद्ध-दिवस के दो दिन बाद, भाग चलने की तिथि नियत हुई थी। सीजी ने अपने सब नौकरों को बिदा कर दिया। घर, माल-असबाब सब बेचकर रुपया बटोरा और भागने का आयोजन करने लगा। यदि कोई चीज बेचने से बची थी, तो वह ईची थी, जो उसके साथ जाने के लिये तैयार थी। सीजी ने सूया से कहा था कि रसोई-घर में चार घड़ी रात गए उससे मिले, उसके पहले-ही-पहले, वह ईची का समाप्त कर देगा, और फिर दोनो एक साथ यात्रा करेंगे।

सूया शिनसुकी को सचेत करके, अपने पीछे-पीछे आने को कहकर, एक लंबे काले वस्त्र से अपने को छिपाकर सीजी के यहाँ नियत समय पर आई।

सीजी ने उसे देखते ही प्रसन्नता से कहा—"यहाँ आओ, मैं इस कमरे में हूँ।"

कमरे में मंद दीप-प्रकाश हो रहा था। सीजी तना हुआ रौद्र वेश से खड़ा था, उसके पैरों के पास, नीचे पृथ्वी पर ईची का शव पड़ा हुआ था। उसके दोनो हाथ फैले हुए थे और भीषण मुखाकृति कह रही थी कि सीजी ने बड़ी कठिनता से उसके प्राण लिए हैं।

सूया के पास आने पर सीजी ने कहा—"अभी-अभी मुझे

भी छुट्टी मिली है। उफ़् ! बड़ी ही ताक़तवर स्त्री थी। बड़ी ही कठिनता से प्राण दिए हैं।"

सीजी की श्वास अब भी वेग से चल रही थी।

"ज़रा मैं भी देखूँ, कैसी उसकी सूरत है।" कहकर सूया मृत ईची का शव देखने लगी। उसकी आँखों से पैशाचिक प्रसन्नता की लपटें निकल रही थीं। यद्यपि ईची का मुख विकृत था, किंतु सुंदरता अब भी अवशेष थी। उसकी आँखें बाहर निकल पड़ी थीं, मानो अंतिम बार के लिये वह उस मनुष्य को देख रही थी, जिसने सहसा उसके प्राण इस कठिन निर्दयता से लिए हैं, जिन्हें देखकर कोई भी साहसी मनुष्य एक बार काँपकर पीछे हट जाता। गले में पड़ा हुआ काला व्रण यह सूचित कर रहा था कि सीजी ने उसका गला दबाकर हत्या की है।

सीजी ने कहा—"बाहर नाव तैयार है। हम लोग यह शव भी अपने साथ ले चलेंगे। रास्ते में कहीं डुबाकर हत्या का प्रमाण नष्ट कर देंगे। यह देखो, मेरा सब रुपया है, जो मैंने जमा किया है।"

यह कहकर उसने एक थैली फेंक दी, जिसमें पाँच सौ रिमो थे।

इसी समय रसोई-घर का द्वार खुला और शिनसुकी भीतर आया।

शिनसुकी ने किवाड़े बंद करते हुए कहा—"सीजी सान,

नमस्कार ! बहुत दिनों में भेंट हुई है। आपने जो कुछ भलाई मेरी सूया के साथ की है, उसके लिये मैं चिरकृतज्ञ रहूँगा।"

शिनसुकी को देखते ही सीजी का मुख पीला पड़ गया। उसने विस्मय-पूर्ण स्वर में कहा—"कौन, शिनसुकी सान ?"

शिनसुकी ने अपने मुख का आवरण निकालकर फेंक दिया था, जिससे वह अपना मुँह छिपाकर सीजी के यहाँ आया था। नीली धारी का श्वेत रेशमी वस्त्र पहने हुए शिनसुकी बहुत ही सुंदर और वीर पुरुष देख पड़ता था। उसके बाल खिंचे हुए सुव्यवस्थित थे। मुख पर एक हलकी-सी व्यंग्य हँसी थी।

शिनसुकी ने उत्तर दिया—"हाँ, तुम्हारा अनुमान सत्य है। मैं शिनसुकी तुम्हारी सेवा में उपस्थित हूँ। मैं कुछ भेद की बातें तुमसे कहने के लिये आया हूँ, जिन्हें तुम नहीं जानते। तुम्हारी स्त्री और सांता के प्राण लेनेवाला मैं हूँ। मैंने ही उन दोनो का जीवन-प्रदीप बुझा दिया था।

सीजी यह सुनते ही शिनसुकी पर झपटा। शिनसुकी पहले से ही तैयार था। दोनो एक दूसरे से गुथ गए। सूया ने सीजी का मुख दबाकर उसे चिल्लाकर सहायता माँगने से हीन कर दिया। सीजी को समाप्त कर देना शिनसुकी के लिये सहज कार्य था।

थोड़ी ही देर में सीजी का शव भी ईंची के शव के पास पड़ा हुआ दिखाई देने लगा।

× × ×

सोजी को मारकर वे पाँच सौ रिमो भी वर्ष समाप्त होते-होते उनकी विषय-वासना में ही समाप्त हो गए। सूया और शिनसुकी को एक साथ रहते, एक वर्ष समाप्त हो गया। पाप-मार्ग दिन-पर-दिन प्रशांत होकर दोनो को अबाध मार्ग दे रहा था, और दोनो निश्शंक होकर नीचे उतरते ही जा रहे थे।

आज कई दिनों से कोई शिकार न फँसने के कारण कुछ दुखी हो रहे थे।

सूया ने कहा—"अगर कोई नया शिकार हाथ न लगा, तो हम लोगों का नव वर्ष सोत्साह नहीं बीत सकता।"

शिनसुकी ने भी अपना मलिन मुख हिलाकर सूया की बात का समर्थन किया। इसके बाद दोनो चुप होकर भविष्य-चिंता में निमग्न हो गए।

वे जितना नीचे उतरते जाते थे, उतनी ही उनकी वासनाएँ भी बढ़ती जाती थीं। आमोद-प्रमोद के प्रति उनकी लिप्सा भी बढ़ती जाती थी। सूया निरंकुश होकर मनुष्यों को अपने प्रेम-जाल में फँसा रही थी, और पुरुष भी कामासक्त होकर पतिंगों की भाँति उसकी रूप-राशि पर गिर-गिरकर भस्म हो रहे थे। सूया का विद्वेष मानो समग्र पुरुष-जाति से है, जो एक-एक को अपने नयन-बाण से बिद्ध कर अपनी प्रतिहिंसाग्नि शांत कर रही थी।

शिनसुकी का मोह और ममत्व सूया के प्रति बढ़ता ही जाता था। जितना ही वह नीचे गिरता, उतना ही वह उस पर

मुग्ध होता। सूया ने अपना व्यवसाय फिर शुरू कर दिया था, और आजकल प्रायः वह देर से घर आती थी। कुछ दिनों तक तो शिनसुकी चुप होकर उसकी गति-विधि देखता रहा, और कुछ विशेष ध्यान न दिया, किंतु जब वह प्रतिदिन इसी प्रकार देर से लौटने लगी, तो उसके हृदय में एक प्रकार का संदेह पैदा होने लगा। जब कभी वह अपना संदेह प्रकट करता, सूया हँसकर कहती—"अभी तक तुम्हारा लड़कपन नहीं गया, मैं कैसे समझाऊँ। क्या तुम्हें नहीं मालूम कि मैं तुम्हें कितना प्यार करती हूँ। क्या तुम्हें यह संभव मालूम होता है कि मैं दूसरे पुरुष से प्रेम करूँगी? अगर तुम्हारे ही पास बैठी रहूँ, तो मेरा व्यवसाय कैसे चले। इस काम में कभी देर-अबेर हो ही जाती है।"

ऐसी बातों से वह उसका उठता हुआ संदेह निवारण कर देती, और सरल शिनसुकी भी उसकी बातों पर विश्वास कर लेता।

सूया अब और देर से घर लौटने लगी। कभी-कभी वह उषा-काल में; और कभी दिन निकल आने पर घर वापस आती। शिनसुकी भी रात-भर उसकी राह देखता-देखता करवटें बद-लता रहता। सूया घर आकर जब शिनसुकी का मलिन मुख और संदेह-जनित दृष्टि देखती, वह तुरंत ही उसे शांत करने के लिये कहती—"गीशा का व्यवसाय भी बड़ा कठिन है। बड़ा ही दुःखदायी। अनिच्छा होते हुए भी कितने ही काम

करने पड़ते हैं। किसी को प्रेम में भुलाकर उसका पैसा खींचना सहज काम नहीं है। किसी के हृदय में प्रेम की आग सुलगाने के लिये न-मालूम कितने छल-छंद करने पड़ते हैं। कभी-कभी मतवाला बनना पड़ता है, कभी-कभी अनंत प्रेम-भाव दिखलाना पड़ता है, परंतु हमेशा उँगली पकड़ाकर अँगूठा दिखाना पड़ता है। कभी-कभी रात-भर तरह-तरह के सब्ज़ बाग़ दिखलाना पड़ता है। ये ही बातें मेरे व्यवसाय की कलाएँ हैं। जो गीशा इनसे अनभिज्ञ होती है, वह कभी अपने व्यवसाय में सफल नहीं हो सकती। दूसरे से धन ऐंठने की जगह अपनी गाँठ से भी कुछ गँवा बैठती है।"

ऐसी ही बातें कहकर वह फिर शिनसुकी का संदेह निवारण कर देती। शिनसुकी समझता था कि वास्तव में सूया उससे ही प्रेम करती है, और यदि वह प्रेम का स्वाँग रचकर उन बेवक़ूफ़ों को मज़े में न लावे, तो कौन उसे पैसा दे। क्या करे, सूया को मजबूर होकर करना पड़ता है। शिनसुकी यद्यपि सबसे गर्हित पापों का अपराधी था, किंतु उसकी स्वाभाविक सरलता का अभी तक नाश नहीं हुआ था। सूया पर उसका अनंत और असीम विश्वास था। गीशा-संसार में रहते हुए भी वह उनके चरित्र और उनकी चालाकियों से सर्वदा अनभिज्ञ था। वह उन्हें जानते हुए भी उनके असली रूप से अपरिचित था। उसे नहीं मालूम था कि गीशा कहाँ तक और क्या-क्या कर सकती हैं। केवल नाच-गा और रिझाकर ही वे पैसा पैदा करती हैं, यही उसका

विश्वास था। गीशा-संसार के संबंध में उसका उतना ही ज्ञान था, जो सूया के मुख से मालूम हुआ और होता था। जो कुछ सूया समझा देती, वह उस पर विश्वास कर लेता। इसके अतिरिक्त और जानने का उपाय ही न था, और न वह उत्कंठित ही था। जब कभी उसकी ईर्षा-प्रकृति जाग उठती, तो सूया उसे बालक की भाँति बहलाकर शांत कर देती।

धीरे-धीरे शिनसुकी अनुभव करने लगा कि अधिकतर अब सूया रात को बाहर ही रहती है। सबसे बड़ी विचित्र बात तो यह थी कि सूया आते ही अपना हाल कह चलती। संध्या से प्रातःकाल तक की सब घटनाएँ उससे कहने लगती। वह अपने को कोसती, गालियाँ देती और वे सब छल और युक्तियाँ बतलाती जिनसे प्रेमिकों को फँसाकर उनका धन हरण करती। इसी प्रकार वह उसको शांत तो करती, किंतु अब उसकी घबराहट लाख छिपाने से न छिपती थी। यदि शिनसुकी की जगह कोई चतुर मनुष्य होता, तो वह कहता कि "तुम मुझे साफ़-साफ़ उल्लू बना रही हो। तुम्हारी आँखों से बदमाशी झलक रही है।" किंतु शिनसुकी को ये सब बातें देखने की बुद्धि न थी। उसे किसी तरह बहला दो, बस यही यथेष्ट है।

एक रात को सूया नशे में बेसुध एक सुंदर पुरुष का कंध-भार ग्रहण किए डगमगाते पैरों से घर लौटी। आते ही उसने कहा—"शिनसान, यह सज्जन बड़े ही सच्चरित्र व्यक्ति हैं,

और मेरे सब प्रेमिकों से अधिक मुझ पर कृपा करते हैं। मेरे अनन्य भक्त हैं। तुम भी तो इन्हें पहचानते होगे। जिस रात से तोकूबी का पता नहीं है, उस रात को घटना क्या भूल गए। दुष्ट तोकूबी के फेर में पड़कर मैं इन्हीं के घर तो इन्हें ठगने गई थी। मैं उस समय तोकूबी के अधीन थी, उसकी बात किसी तरह अस्वीकार न कर सकती थी। अब इन्होंने मेरा सब अपराध क्षमा कर दिया है। तुम भी मेरी ओर से इनसे क्षमा माँग लो, और इस दया के लिये उन्हें धन्यवाद दो।"

इस समय सूया की आँखों से विषय-वासना के बाद जो अर्द्ध जाग्रत् बेसुधी होती है, उसके एक विचित्र प्रकार के परंतु मनोमोहक निरालसता के चिह्न प्रकट हो रहे थे। उसके पैर डगमगा रहे थे, वस्त्र अस्त-व्यस्त, मुख नोचा-खसोटा हुआ, और कपोलों पर तप्त चुंबनों के व्रण पड़े हुए थे। उसका कंठ-स्वर फटे बाँस की भाँति भर्राया हुआ था या फूटे काँस के बर्तन की तरह बोल रहा था। जिस आशीज़ावा को वह उस दिन गालियाँ दे आई थी, वही आशीज़ावा उसका सबसे कृपालु प्रेमी है, यह कहकर अपने पति से परिचय देते हुए लाज से उसके माथे पर किंचित्-मात्र बल न पड़ा। उसकी आँखें नीचे न झुकीं।

शिनसुकी ने आशीज़ावा की ओर देखा। वह एक सुंदर नवयुवक था। उसके गठीले शरीर पर फ़ौजी वस्त्र बड़ा

ही भव्य देख पड़ता था। उसका मुख तेजोमय और प्रदीप्त था। उसका मस्तक उन्नत और आँखें भावमयी थीं, जो सहज ही में किसी भी मन-चली रमणी को मोहित करनेवाली थीं। आशीजावा को देखकर शिनसुकी को विश्वास हो गया कि सूया इसी पुरुष के प्रेम में फँसी है। उसके रात-रात-भर न लौटने का यही कारण है।

आशीजावा ने कहा—"शिनसुकी सान, मैं अभिवादन करके आपसे अपने पिछले अपराधों की क्षमा-प्रार्थना करता हूँ, और साथ ही यह भी विनय करता हूँ कि हम लोग उस रात्रि की घटना को भूलकर, नए सिरे से मित्रता के बंधन में आबद्ध हों। यदि कभी आप मेरे घर 'तेराशीमुरा' में आने का कष्ट करें, तो मैं अपने को बड़ा भाग्यवान् समझूँगा। मैं निमंत्रण दिए जाता हूँ, जब इच्छा हो, आइएगा।"

आशीजावा के मुख पर व्यंग्य की एक हल्की हँसी झलकने लगी। उसकी आँखों से उस सरल मूर्ख के प्रति दया बरसती थी। वह भी मद-मत्त था, और सूया से अधिक नशे में झूम रहा था।

शिनसुकी क्रोध और वेदना से पागल हो उठा। किंतु प्रमाण एकत्र कर लेने तक उसने शांत रहना ही उचित समझा।

शिनसुकी यदि इस समय कुछ कहता, तो सूया उसे बातों में उड़ा देती। किंतु आज की घटना से उसका उसके ऊपर से विश्वास जाता रहा, और वह उसके विरुद्ध प्रमाण एकत्रित

करने के उद्योग में लग गया। वह उसे पाप में संलग्न घटना-स्थल पर पकड़ना चाहता था।

एक मास के अनवरत परिश्रम से, सूया के नौकरों को मिला-कर और चाय-घर के परिचारकों को लंबी-लंबी रक़में देकर, शिनसुकी का भ्रम विश्वास-रूप में परिणत हो गया। वह बरा-बर उससे छल कर रही है, इधर-उधर का बहाना करके वह आशीज़ावा के घर जाती, और उसके साथ अपनी पाशविक प्रवृत्ति को शांत करती है। किंतु प्रमाणों के नाम से कुछ भी उसके पास न था। सूया की वास्तविकता तो उसे विदित हो गई, किंतु प्रमाणों से वह हीन था। सूया को उसकी सरलता पर इतना अधिक विश्वास था कि वह निर्भय, तरह-तरह की गढ़ी हुई घटनाएँ वर्णन करती। उन प्रेमिकों की मूर्खता पर हँसती, और बार-बार शिनसुकी को अपने आलिंगन-पाश में बाँधकर उसका प्रेम से मुख चूमती। किंतु अब शिनसुकी को मालूम होने लगा कि उसके आलिंगन में प्रेम की बेसुधी नहीं है, बल्कि बनावटी और बरज़ोरी है। उसकी बातों में सत्यता कहाँ तक है? अब शिनसुकी कभी-कभी उसकी आँखों की ओट में लुके हुए क्रूर विश्वासघात के चिह्न भी देख लेता।

उसके इस प्रेम-अभिनय से वह कभी-कभी क्रोध से उबल पड़ता।

नव वर्ष का तीसरा दिन था। सूया सबेरे घर लौटी। शिन-सुकी अब न सहन कर सका। उसने सक्रोध कहा—"जिस

तरह तुम मुझे धोखा दे रही हो, मैं अच्छी तरह जानता हूँ। मेरी आँखें अब खुल गई हैं। मैंने सब पता लगाकर तुम्हारा भेद जान लिया है। तुमने आजकल अपनी चालबाजी और बद-माशी में जरूर उन्नति कर ली है, लेकिन अब मेरी आँखों में तुम धूल नहीं झोंक सकतीं। तुमने।......"

शिनसुको का विश्वास था कि सूया अपना अपराध अस्वी-कार करेगी, और वह प्रमाणों से उसका अपराध प्रमाणित करेगा। किंतु सूया ने सक्रोध तीव्र स्वर में बात काटकर कहा— "हाँ-हाँ, ठीक है, मैंने सत्य ही अपने को आशीज़ावा के हाथों बेच दिया है। लेकिन शिनसान, तुम्हें भी यह समझना चाहिए कि तुम्हारी स्त्री एक गीशा है। मूर्ख और अबोध न बनकर ज़रा समझ से भी काम लेना चाहिए। मैं दूसरी स्त्रियों की भाँति सच्चरित्र और निष्पाप हो सकती थी, परंतु तुमने कब मुझे रहने दिया है। जब मैं धन उपार्जन करके तुम्हें खिलाती हूँ, तो तुम्हें भी समझना चाहिए कि दूसरा आदमी मुफ़्त में अपना धन देकर तुम्हें पालन-पोषण नहीं करेगा। बिना कुछ बदले में पाए वह अपना पैसा पानी की तरह मेरे ऊपर न बहाएगा। कोई यों ही अपना धन मुझे नहीं दे देगा। अगर तुम ऐसा समझते हो, तो यह तुम्हारी मूर्खता है। मैं अपने मुख से अपने पाप की बात न भी कहूँ, तो क्या तुम्हारे बुद्धि नहीं है या तुम्हारे आँखें नहीं हैं? इसके लिये मैं दोषी नहीं कही जा सकती। जानते हो, यह सब नीच और पाप-कर्म मुझे तुम्हारे

आमोद-प्रमोद, तुम्हारे जीवन को आनंदमय बनाने के लिये बरबस करने पड़ते हैं। मुझे अपनी यह देह बेचते हुए, स्वय लाज से कट जाना पड़ता है, पर क्या करूँ, तुम्हारे लिये सब करना पड़ता है। मुझे तो यही विश्वास था कि तुम सब जानते हो, और तुम कभी मुझे ऐसी कड़ी बातें न सुनाओगे। यह सब प्रपंच इसीलिये रचती था, जिसमें तुम चुप रहो, अपनी आँख और मुख बंद किए बैठे रहो। तुम मेरे ऊपर विश्वास करके सानंद जीवन व्यतीत करो। किंतु जब तुमने अपने ही यत्न से सब भेद जान लिया है, तो लो और सुनो। तुम्हारे आने के पहले मैं तोकूबी और सीजी की अंकशायिनी हो चुकी थी। अगर अभी तक तुम्हें मालूम न था, तो अब मालूम हो जाना चाहिए। अगर तुमने मेरे ऊपर विश्वास कर लिया था, मेरी बातों को बुद्ध-वाक्य मान लिया था, तो यह तुम्हारी मूर्खता थी, बुद्धिमत्ता नहीं।"

शिनसुकी अब अपने को और न सँभाल सका। वह सूया को उसके विश्वासघात के लिये अब भी क्षमा कर सकता था, वह अब भी सब भूलने के लिये तैयार था, किंतु सूया के कथन से कुछ भी अनुराग या प्रेम न टपकता था। उसकी जली-कटी बातों से यही तात्पर्य निकलता था कि आज दोनो में खूब झगड़ा हो जाय, और वे दोनो अलग हो जायँ। सूया अपनी मनमानी करने के लिये स्वतंत्र हो जाय। वे दोनो अपने-अपने पथ पर जायँ!

शिनसुकी ने सक्रोध कहा—"ठीक है, मैंने गोशा पर विश्वास किया, यह मेरे लिये प्रशंसा की बात नहीं है। लेकिन मैं तो तुम्हें गोशा न समझकर सूया समझता था। मुझे स्वप्न में भी अनुमान न था कि सूया इतना क्षुद्र और पतित हो सकती है। अच्छा, अब विश्वासघात का कुछ प्रसाद लो।"

यह कहकर शिनसुकी ने उसे पृथ्वी पर गिरा दिया, और एक छड़ी लेकर उसकी कोमल देह पर प्रहार करने लगा।

जब शिनसुकी सूया को मार रहा था, तो उसके हृदय से न-मालूम कैसा एक शोकोच्छ्वास उमड़ रहा था। उसकी अवस्था ठीक वैसी थी, जो एक बालक की अपने माता-पिता से पृथक् होकर होती है। एक उच्छ्वास की गाँठ उमड़कर उसके कंठ को रोक रही थी। उसने कभी न अनुमान किया था कि बात यहाँ तक पहुँच जायगी। जहाँ वह सूया को लज्जित और अप्रतिभ करना चाहता था, उसे ऐसी कठोर झिड़की मिली। वह क्या करे ? सूया को क्या छोड़ दे ? यह विचार आते ही उसका हाथ ठहर गया।

सूया ने चिल्लाकर कहा—"मारो, मारो, मुझे मार डालो। मैं सचमुच आशीजावा पर मुग्ध हूँ। उसके लिये मरने को तैयार हूँ। मैं उसको प्राणों से अधिक प्यार करती हूँ। यह ध्रुव सत्य है। तुम्हारे-जैसे मूर्ख से मेरा मन ऊब उठा है। तुम्हारे ऊपर मेरा तनिक भी अनुराग नहीं है। मैं आशीजावा की हूँ, और आशीजावा मेरा है। वह मेरा है, मेरा है, मेरा है।"

सूया की बात सुनकर शिनसुकी स्तब्ध रह गया। उसके हाथ से बेंत गिर पड़ा। न-मालूम उसका मन कैसा होने लगा। एक अद्भुत आवेग के वशीभूत होकर वह उसके पैरों पर गिर पड़ा और कहने लगा—"सूचान, मैं बहुत लज्जित हूँ। मुझे बहुत दुख है कि मैंने तुम्हें इतना मारा है। मैं फिर कभी ऐसी बात न कहूँगा, फिर कभी तुम पर हाथ न उठाऊँगा। मुझे क्षमा करो, और फिर पहले की तरह हँसो। सूचान, अपने जीवन की पिछली बातों को तो याद करो। मेरे प्रति तुम्हारा कितना असीम और अटल अनुराग था। उसी की याद करके अपने चरणों में स्थान दो। मुझे पहले की तरह फिर प्यार करो।"

शिनसुकी बड़े ही करुण शब्दों में उसके पैरों पर सिर रक्खे क्षमा-याचना कर रहा था, लेकिन सूया बराबर यही कह रही थी—"मुझे अब अपनी रक्षा भी करना है, मैं अभी कुछ नहीं कह सकती, दो-तीन दिन बाद इसका उत्तर दूँगी।"

सूया पाषाणवत् बैठी रही।

× × ×

उपर्युक्त घटना के दो-दिन बाद 'येदो' (टोकियो) में "ओ-सूया" की हत्या की सनसनी फैल गई। सबके मुँह पर सोभी-कीची और शिनसुकी का नाम था। शिनसुकी के मुख से सोभीकीची का पूर्व-इतिहास सुनकर लोग विस्मित होकर दाँतों-तले उँगली दबा रहे थे।

उस दिन से सूया सदैव शिनसुकी की ओर से सशंकित

रहती। शिनसुकी को त्याग देने में ही उसने अपना कल्याण समझा। शिनसुकी के साथ रहकर वह आशीजावा के साथ सुख नहीं भोग सकती थी। आशीजावा की संरक्षता में जाना ही सर्वोत्तम उपाय था। शिनसुकी अब उसके पथ का काँटा हो गया था।

सूया तीसरे दिन तैयार होकर अपनी जमा-पूँजी लेकर एक चाय-घर में गई। वहाँ पर वेश बदलकर आशीजावा के घर में जाने के लिये पालकी पर चढ़कर उसने मुकोजीमा की ओर प्रस्थान किया। शिनसुकी भी सतर्क था। उसकी प्रत्येक गति-विधि पर उसकी दृष्टि थी। वह उसके पीछे-पीछे चाय-घर आया था, और अब मुकोजीमा की ओर जाते देखकर ईर्षा से उसकी अंतरात्मा सिहर उठी। वह एक कठिन संकल्प करता हुआ उसके पीछे-पीछे हो लिया।

'मुकोजीमा' में नदी-तट पर 'मिमेगुरी' मंदिर के पास उसने सूया की पालकी रोक ली, और उसे पकड़कर पालकी के बाहर घसीटा।

सूया ने हाथ जोड़कर, काँपते हुए विनीत स्वर में कहा—"शिनसान, मुझ पर दया करो। एक बार, केवल एक क्षण-भर, मुझे आशीजावा सान को देख आने दो। बस, फिर मुझे तुम मार डालना। मैं कुछ भी आपत्ति न करूँगी, लेकिन मरने के पहले उसे एक बार देख आने दो, नहीं तो मैं सुख से मर न सकूँगी।"

सूया छुड़ाकर आशीजावा के घर की ओर भागी। शिनसुकी ने दौड़कर उसे पकड़ लिया। वह काटने और सहायता के लिये चिल्लाने लगी। शिनसुकी उसका गला पकड़कर दोनो हाथों से अमानुषिक बल से दबाने लगा। मरती हुई सूया के कंठ से जो शब्द निकला, वह आशीजावा का नाम था। यही उसके पाप-प्रेम का अंतिम प्रेमिक था। उसी की याद करते हुए सूया के प्राण शरीर-पिंजर से मुक्त हो गए! उसकी आत्मा मुक्त होकर किसी दूसरे अनजान देश में 'पाप की ओर, अग्रसर हुई।

शिनसुकी का वह अंतिम हत्याकांड था।